UNIVERSAL LIBRARY
OU_180642
UNIVERSAL LIBRARY

नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—२

चंद्रशेखर कवि विरचित

हम्मीर-हठ

संपादक

जगन्नाथदास 'रत्नाकर' बी० ए०

180652

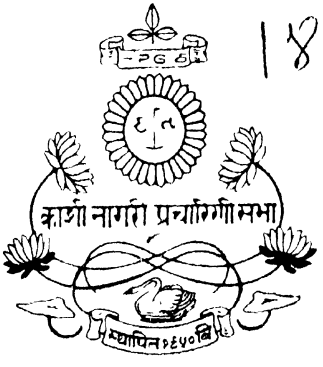

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

द्वितीय संस्करण] १९२८ [मूल्य ॥)

Published by
K. Mitra
The Indian Press, Ltd
Allahabad.

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd
Benares-Branch.

उपक्रम

प्रिय पाठकगण,

आज मुझे वास्तव में बड़ा प्रसन्नता प्राप्त हुई कि सर्व-शक्तिमान् जगदीश्वर के अनुग्रह से ऐसा अवसर उपस्थित हुआ कि हम्मीर-हठ की पुस्तक पूरी करके आप लोगों के करकमलों में अर्पित कर सका। भाषा-काव्य में शृंगार के तो अनेक ग्रंथ छप भी चुके हैं और छपते भी जाते हैं परंतु वीररस के ग्रंथों का तो एक प्रकार से अभाव ही समझा जाता है। इससे यह नहीं कहा जा सकता कि हमारी मातृभाषा के कवियों ने इस अत्यावश्यक रस का काव्य किया ही नहीं वरन् इसका मुख्य कारण यह जान पड़ता है कि शृंगार की ओर लोगों की रुचि अधिक होने के कारण विशेष प्रचार उसी रस के ग्रंथों का हुआ। इसमें संदेह नहीं कि शृंगार के ग्रंथ वीरादि रसप्रधान ग्रंथों की अपेक्षा हैं भी अधिक और एतावता सुलभ भी हैं, परंतु यह बात भी हम अवश्य कहेंगे कि खोज करने से वीरादि रस के भी उत्तमोत्तम ग्रंथ प्राप्त हो सकते हैं। जैसे एक दूसरे कवि का बनाया हुआ

हम्मीरहठ, भूषण-हजारा (भूषण कवि कृत जिससे कि शिवा जी के समय की बहुत सी ऐतिहासिक बातें ज्ञात होती हैं) और फर्रुखसियर बादशाह के समय की लड़ाई का वर्णन (श्रीधर कवि कृत) इत्यादि ग्रंथ मैंने स्वयं देखे हैं और यदि आप लोगों की रुचि उस ओर देखूँगा तो समयानुसार उनके संपादन करने का भी यत्न करूँगा। इसी प्रकार मुझको आशा है कि यदि हमारे देश के लोग खोज करें तो अनेक गुप्त रत्नों का प्राप्त होना असंभव नहीं है।

इतिहास

इस ग्रंथ में हम्मीर देव रणथंभगढ़ (जो कि जयपुर के निकट है) के राजा तथा अलाउद्दीन पादशाह की लड़ाई का वर्णन है। इतिहास में इस लड़ाई के विषय में यह लिखा है कि अलाउद्दीन पादशाह का एक सरदार मीरमुहम्मद मंगोल नामक भागकर हम्मीरदेव की शरण में चला गया था। पादशाह ने राजा से अपना अपराधी माँगा पर राजा ने शरणागत का परित्याग न किया। इस पर पादशाह ने सन् १३०० ई० में चढ़ाई की और रणथंभगढ़ को जय कर लिया। जब पादशाह जय कर चुका तो उसने देखा कि मीर मुहम्मद भी घायल होकर खेत में पड़ा है। पादशाह ने उससे पूछा कि यदि इस समय हम तुमको उठवा ले चलकर तुम्हारी दवा करें तो तुम अच्छे होकर हमसे क्या बर्ताव करोगे। मंगोल ने उत्तर दिया

कि हम तुम्हारा सिर काटकर हम्मीर वीर के राजकुमार को दिल्ली के सिंहासन पर बैठावेंगे। यह सुनकर अलाउद्दीन ने उसको हाथी से कुचलवा दिया।

इस ग्रंथ के और इतिहास के वृत्तांत से इतना विरोध पड़ता है कि इतिहास में तो लिखा है कि पादशाह ने हम्मीर को जीत लिया और वह लड़ाई में मारा गया; और इस पुस्तक से यह जाना जाता है कि हम्मीरदेव ने लड़ाई में पादशाह को भगा दिया और गढ़ में लौट आने पर भावीवश स्त्रियों का आत्मघात करना ज्ञात करके उसने स्वयं अपना सिर काट डाला। उस समय के इतिहास लिखनेवाले विशेषत: मुसलमान ही थे फिर क्या आश्चर्य है कि उन लोगों ने अपने स्वभावानुसार अपने पादशाह को एक हिंदू राजा के आगे से संग्राम में भागने के कलंक से बचाने के हेतु एक मनमानी कहानी बनाकर लिख दी हो।

इसमें संदेह नहीं कि इसी प्रकार का दोषारोपण इस ग्रंथ के कर्ता कवि पर भी हो सकता है कि उन्हीं ने हिंदू राजा की कीर्त्ति बढ़ाने के लिये सच्चे वृत्तांत को बदलकर कुछ का कुछ लिख दिया। परंतु उन्होंने इसकी रचना एक प्राचीन चित्रावली के अनुसार की है जिसको मैंने स्वयं पंजाब-यात्रा के समय महाराजा साहब बहादुर पटियाला के सरस्वती भवन में देखा है। यदि चित्र खींचनेवाले पर यह दोष लगाया जाय तो लग सकता है।

पटियाला के पुस्तकालय में संवत् १८८५ का बना हुआ एक हम्मीरहठ जोधराज कवि कृत भी है। परंतु मुझे बड़ा खेद है कि ऐसा अवसर न मिला कि मैं उसको आद्योपांत देखता। एतावता मैं यह नहीं कह सकता कि इस विषय पर उसमें क्या लिखा है*।

संस्कृत में जो हम्मीर महाकाव्य नामक ग्रंथ है उससे और इस ग्रंथ से कई बातों में भेद पड़ता है। हम्मीर के मारे जाने के विषय में वह इतिहास के अनुकूल है।

कविता

इस ग्रंथ की कविता बड़ी मनोहर और उमंगवर्द्धिनी है। ओज, माधुर्य और प्रसाद तीनों गुण अपने अपने स्थान पर सुशोभित हैं। कवि की प्रौढ़ता अक्षरों से प्रगट होती है। बहुधा कवियों के काव्य में भोंड़ापन आ जाता है, इस दूषण से भी यह ग्रंथ रहित है। किस अवसर पर कैसे अर्थ का साधन किन शब्दों के द्वारा करना उचित है इस बात पर कवि जी ने ध्यान रखा है और वे इसमें कृतकार्य भी हुए हैं, जैसे कि मीर मुहम्मद के वचन सुनने के उपरांत हम्मीर के उत्साह

* जोधराज-कवि-कृत हम्मीर-रासो अब नागरीप्रचारिणी सभा ने छपवा दिया है। उसमें भी हम्मीर का मरना वैसे ही लिखा है जैसे इस काव्य में। पटियाले में जो चित्रावली है उसके विषय में अनुमान होता है कि वह जोधराजकृत हम्मीर रासो ही के अनुसार बनाई गई थी और उसी पर चंद्रशेखर जी ने अपना काव्य रचा।

प्रकट करने के हेतु इस दोहे ["भुज फरकत हरषे सुनत सरनागत की बात। बोले बिहँसि हमीर तब उमँग न गात समात ॥"] से बढ़कर और क्या कहा जा सकता है। क्षत्रिय जातीय वीरता इससे टपकी पड़ती है। इसी प्रकार मंत्रियों के समझाने पर जो उत्तर हम्मीर ने दिया ["धड़ नच्चै लोहू बहै परि बोलै सिर बोल। कटि कटि तन रन में परै तौ नहिं देहुँ मँगोल ॥"] उसमें शरणागत की रक्षा करने की टेक और प्राण को धर्मपालन के हेतु कोई वस्तु न समझना इन बातों को कैसी दृढ़ता से कवि ने प्रकाशित किया है। युद्ध का वर्णन भी कवि ने उत्तम रीति से किया है "बदल समान मुगलदल उड़े फिरैं" बहुत ही प्रबल पद है जहाँ हम्मीर के बाहर निकलकर लड़ने का वर्णन है। लड़ाई का एक चित्र सा खींच दिया है। अंत में शांत रस की उदासी का चित्र भी बहुत अच्छी रीति से खींचा है।

छंद भी कवि जहाँ तहाँ बदलते जाते हैं जिससे दो कार्य साधन होते हैं। प्रथम तो यह कि पढ़नेवाला नए नए छंदों के कारण उकताता नहीं दूसरे यह कि बहुधा जहाँ जो उचित है वहाँ वह छंद इस अदल बदल में पड़ जाता है।

इतना कविता का ध्यान दिलाने के हेतु लिख दिया गया। विशेष गुण दोष पाठक लोग स्वयं ध्यान देने से विचार सकते हैं।

कविजी का संक्षिप्त जीवनचरित्र

इस हम्मीरहठ के रचयिता पंडित चंद्रशेखर जी वाजपेयी मिती पौष शुक्ल १० संवत् १८५५ में मौजबाबाद, जिला फतहपुर, में (असनी के निकट) उत्पन्न हुए थे। इनके पिता पंडित मनीराम जी वाजपेयी भी अच्छे कवि थे। इनके वंश में काव्य की चर्चा कई पीढ़ियों से चली आती है। पहले इनके वंश की आजीविका हुंडी इत्यादि की थी; कविता केवल मन के उत्साह से की जाती थी। पर हंसराम जी के समय से, जो कि श्रीगुरुगोविंदसिंह जी के कृपापात्र थे, यही जीविका हो गई। पंडित चंद्रशेखर जी भाषा काव्य में असनी निवासी करनेश महापात्र* के शिष्य थे। १० वर्ष की अवस्था में यह उनके पास बैठाए गए थे। हमारे कवि जी संस्कृत के भी पंडित थे पर उनके संस्कृत के गुरु का नाम नहीं मालूम है।

विद्याध्ययन करने के पश्चात् ये महाशय २२ वर्ष की अवस्था में देशाटन करने के निमित्त घर से चले। उस समय इनके पिता जीवित थे और घर में भगवद्भजन करते थे। पहले चंद्रशेखर जी दर्भंगा की ओर गए और उस प्रांत के राज-दरबारों में उन्होंने यथोचित प्रतिष्ठा पाई।

सात वर्ष के अनुमान उसी प्रदेश में रहे, फिर २८ वर्ष की अवस्था में जोधपुर गए। उस समय वहाँ महाराज मानसिंह

* महापात्र से महा-ब्राह्मण न समझना चाहिए। बादशाह की दी हुई उपाधि है जो कि फारसी शब्द "आलीजर्फ" का उल्था है।

सिंहासन पर थे। उनकी सभा में अच्छे अच्छे बावन कवि उपस्थित थे। ये महाशय बाँकीदान चारण के द्वारा दरबार में पहुँचे और यह कवित्त पढ़ा—

'द्वादश कला सौं मारतंड ये उवैंगे चंड,
सेसवारी साँसनि समस्त सत्रु जलि है।
छूटि जैहै अचल अवास अमरेस-वारो,
कूट जैहै कहलि कलां-सी भूमि हलि है॥
शेषर कहत अलका मैं कलापात ह्वै है,
पावक पिनाकी के त्रिशूल सौं निकलि है।
तू न तानि भौंहैं भानुबंसी भूपमान ना तौ,
जानि लैहै प्रलय पयोधि फूटि चलि है॥"

महाराज ने प्रसन्न होकर सौ रुपया महीना उनका कर दिया और वे ६ वर्ष तक वहीं बड़े प्रतिष्ठापूर्वक रहे, फिर महाराज मानसिंह के स्वर्गवास होने के पश्चात् जब महाराज तख्तसिंह गद्दी पर बैठे तो उन्होंने किफायत करना आरम्भ किया और सबकी तनख्वाहें आधी कर दीं। कविजी को आधी तनख्वाह पर रहना स्वीकृत न हुआ और वहाँ से वे लाहौर की ओर महाराज रणजीतसिंह के पास चले।

अन्न जल के हाथ बात है। पटियाले में पहुँचकर सरदार जयसिंह सायनी (वर्तमान सरदार सुजानसिंह कुँवर जी साहब डेवढ़ीवाले के पिता) तथा सरदार खुशहालसिंह जी (वर्तमान सरदार प्रतापसिंहजी के पितामह) के द्वारा श्री

महाराज कर्मसिंह जी पटियालाधिपति के दरबार में पहुँचे। इनकी कविता से महाराजा साहब बहुत प्रसन्न हुए और पाँच रसद पक्की इनके वास्ते कर दी। इसके सिवा सवारी इत्यादि का प्रबंध ऊपर से कर दिया। फिर तो ये कवि जी वहीं रह गए और वहाँ की प्रतिष्ठा के आगे जोधपुर के सौ रुपए भूल गए, यहाँ तक कि जोधपुर से लाड़िलीदास मुंशी महाराज तख्तसिंह के भेजे हुए इनको बुलाने भी आए और कहा कि आप चलिए आपकी तनख्वाह आधी न की जायगी, पर इन्होंने पटियाले के सम्मान को छोड़कर जाना उचित न समझा। तब से लेकर अंतकाल पर्यंत पटियाले ही में रहे। कभी कभी छुट्टी लेकर वृंदावन जाया करते थे क्योंकि उनको वहीं का इष्ट था। वृंदावन-शतक इन्होंने वृंदावन ही में बनाया था। देहांत इनका संवत् १९३२ में हुआ।

महाराज कर्मसिंह के आज्ञानुसार इन्होंने एक नीति का बृहद् ग्रंथ रचा। जब महाराज कर्मसिंह जी का देहांत हुआ और उनका अस्थि-संचयन हो रहा था उस समय ऐसे गुणग्राहक स्वामी के मरने के कारण यह बड़े विलाप से अश्रुपात कर रहे थे और बड़े ही उदास और मलिन थे। महाराज नरेन्द्रसिंहजी ने उनकी यह दशा देखी और दरबार में जाकर चोबदार से बुलवाकर कहा कि तुम उदास मत हो, तुम्हारा वैसा ही आदर सम्मान होता रहेगा। उस समय महाराज हम्मीरहठ की एक चित्रावली देख

रहे थे। उसे कवि जी को देकर आज्ञा दी कि तुम इसका वर्णन काव्य में बाँध लाओ। उसी आज्ञानुसार उन्होंने यह हम्मीरहठ रचा।

चंद्रशेखर जी के बनाए हुए इतने ग्रंथ हैं—हम्मीरहठ, नखशिख, रसिकविनोद, वृंदावन-शतक, गुरुपंचाशिका, ज्योतिष का ताजक, माधवीवसंत (बड़ा ग्रंथ है), हरिभक्तविलास (बड़ा ग्रंथ है) और राजनीति का बृहद् ग्रंथ (७००० श्लोक के अनुमान है)। इनमें से नखशिख और रसिकविनोद भारतजीवन प्रेस में मैं छपवा चुका हूँ और हम्मीरहठ साहित्यसुधानिधि में प्रकाशित हुआ। परंतु यह बहुत ही अशुद्ध छपा। इसलिये इसको पुनः संपादित करके आज हिंदी के काव्यप्रेमियों की भेंट करता हूँ। यदि ये दो ग्रंथ आप लोगों को रुचेंगे तो और भी समयानुसार छप जायँगे।

इन कवि जी के पुत्र पंडित गौरीशंकर जी वाजपेयी पटियाले में वर्तमान हैं। ये महाशय बड़े प्रेमी और सुहृद हैं। कविता इनकी बहुत चोखी और रसीली होती है। जब मैं पटियाले गया था तब मुझसे इनसे प्रतिदिन घंटों सत्संग रहता था। इन्हीं की कृपा से मुझे चंद्रशेखर जी के कई ग्रंथ प्राप्त हुए और यह जीवनचरित्र भी मुझे इन्हीं से मिला इसलिये मैं उनका चिरबाधित हूँ।

शिवालय घाट,
बनारस।

जगन्नाथदास 'रत्नाकर', बी० ए०

श्री गणेशाय नमः

हम्मीर-हठ

दोहा

गिरिवरधर अरु गंगधर, चरनसरन सिर नाइ।
या हमीरहठ की कथा, कहौं सबहि समुझाइ ॥ १ ॥
परसुराम, ध्रुव, भुव अचल, अहिफन पर जिमि पत्र।
श्री नरेन्द्र मृगराज नृप, तब लगि तव जसछत्र ॥ २ ॥
श्री नरेन्द्र मृगपति नृपति, दिनप्रति दयानिधान।
दीन जानि कीनी कृपा, मोपर परम सुजान ॥ ३ ॥
निकट बोलि दीन्हयौ हुकुम, यह हमीरहठ जौन।
छंदबंद करि कै रचौ, कथा सुहावनि तौन ॥ ४ ॥
महाराज के हुकुम तैं, जिहिं बिधि चित्रचरित्र।
सो सेखर भाषा करी, दूषन करेहु न मित्र ॥ ५ ॥
दक्खिन दिसि रनथंभगढ़, तहँ हमीर चहुआन।
महाबीर रनधीर तिहिं, जानत सकल जहान ॥ ६ ॥

साह अलाउद्दीन उत, इत हमीर हठधारि।
भयौ रायसौ दुहुनि कौ, जेहिँ बिधि सेा निरधारि ॥ ७॥
देसदुनी-पति दीनपति, दिल्ली-तखत-नसीन।
दूजौ सूरज सौ तपै, साह अलाउद्दीन ॥ ८॥
थर थर कंपै मेदिनी, रविरथ झंपै धूरि।
साह अलाउद्दीन जब, सहज चलत कछु दूरि ॥ ९॥
असी लक्ख दल बल सजे, जिहिं दिसि देखत बंक।
तिहिँ दिसि कोप्यौ काल जनु, होत राव सब रंक ॥१०॥
सेा इक दिन महलनि गयौ, जहाँ जनाने खास।
सब हजूर हाजिर भईं, हरमैं* सहित खवास ॥११॥

कबित्त

थेारी थेारी बैसवारी नवलकिसेारी सबै,
भेारी भेारी बातनि बिहँसि मुख मेारतीँ।
बसन बिभूषन बिराजित बिमल बर,
मदनमरेारनि तरकि तन तेारतीँ॥
प्यारे पातसाह† के परम अनुराग रँगीँ,
चाय भरीँ चायल चपल दृग जेारतीँ।
काम-अबलासी कलाधर की कलासी चारु,
चंपक लतासी चपलासी चित चेारतीँ ॥१२॥

---

* बेगमें।

† पादशाह या बादशाह।

ंगम उवाच---सोरठा

आलीजा * इक बार, हम सबकौं लै साथ मैं ।
जंगल हरिन-सिकार, खेलौ ये अरजैं करैं ॥१३॥

दोहा

अरजैं सुनि आयौ बहुरि, पातसाह दरबार ।
बरु बिचार मन मे किये, खेलौं भोर सिकार ॥१४॥
करि कनात ऊँचा खड़ी, कानन के चहुँ ओर ।
साज्यौ साज सिकार कौ, पातसाह सिरमौर ॥१५॥

चौपाई

नजे आप सुलतान सँभारी† । सजीं बेगमैं साज सिकारी ॥
ंग रंग के सजे तुरंगा । कुल्लह समुद कुमैत सुरंगा‡ ॥
प्रमित रंग बरनै को औरै । उड़त कुरंग संग सब ठौरै ॥
ुबरन साज जीन जरदोजी । जगमगात तन अगनित ओजी ॥
ाखत§ पेसबंद§ अरु पूजी । हीरन जटित हैकलैं§ दुजी§ ॥
लँगी§सड़क§संत गजगाहैं§ । यालनि||जटित मंजु मुकता हैं ॥

---

* आलीजाह = उत्कृष्ट राज्यश्री-संपन्न ।

† व्रजभाषा में इस प्रकार की पूर्वकालीन क्रिया का शुद्ध रूप कारांत होता है । पर प्रायः कवियों ने तुकांतों में उसका ईकारांत योग भी किया है ।

‡ कुल्ला इत्यादि घोड़ों के रंग हैं ॥

§ घोड़ों के आभूषण विशेष ।

|| अयाल—घोड़ों के गरदन पर के बाल ।

अंग अंग बर बने तुरंगा। चढ़े चाव मनु चपल कुरंगा॥
बेगवंत बरजोर बखाने। सजि सजि सकल साहि ढिग आने॥

कबित्त

सुंदर सुसीले सब भाँतिनि सजीले खुले,
थान तैं थँभैं न महि खंडत चलत हैं।
जोम-भरे जात यौं जकंदत* जमत तुरी,
जंग मैं न मुरत मतंगनि मलत हैं॥
चाय सौं चपल चंचला से चमकत,
पातसाह के तुरंग जे कुरंगनि छलत हैं।
हुंकरत हींसत फबत फुंकरत,
फरमंडल † मँझार दल दीरघ दलत हैं॥२०॥

दोहा

मरदानी सब बेगमैं, आप सूर सुलतान।
हरषि तुरंगनि पै चढ़े, गहि कर बान कमान॥२१॥

सवैया

खेलि सिकार रहीं सिगरी सजी साह के संग तुरंग चढ़ीं ते।
स्याम सुरंग हरे पियरे पट मानहु दामिनी मेघ मढ़ीं ते॥
जेब जड़ाव के जेवर की उलहै अति अंग उमंग बढ़ीं ते।
सूरज की किरनैं मनौ कोटिनि मेघनि के तन फोरि कढ़ीं ते‡॥२२॥

* उछलते कूदते।
† रणक्षेत्र।
‡ ते के स्थान पर यदि चारों तुकों के अंत में 'हैं' पढ़ा जाय तो अर्थ बहुत स्पष्ट हो जाय।

कबित्त

चंद की कला सी बिमला सी चढ़ीं बाजिनि पै,
बसन बिभूषन वलित बर बेनी हैं।
किन्नरी परी सी जरी हेम की छरी सी भरीं,
जोबन अनूप रूप रति-सुख-देनी हैं॥
जोरतिं नयन चित चोरतिं पिया कौ मुख,
मोरतिं बिहँसि चितवनि करि पैनी हैं।
जौनी ओर जातिं बन बीथिनि मैं तौनी ओर,
हेरि हेरि मारतिं मृगनि मृगनैनी हैं॥२३॥

भूलना

लगी होन आखेट आरन्न माहीं छिड़े एक तैं एक तुरंग तीखे।
करैं पौन के संग मैं गौन रूरे मनौ बाज छूटे कला कांटि सीखे॥
चढ़ीं बेगमैं साह सुलतान साथैं सबै बैस थोरी बड़े रूप पीखे।
गहे बान कम्मान समसेर नेजे सुनी बात कानैं लिखी आँख दीखे २४
कहूँ खोंचि कम्मान कौं बान मारैं मृगा जात भागे लगी पूर छोटैं(?)।
कहूँ खोंचि समसेर कौं फेरि घोड़ा करैं वार द्वै खंड ह्वै भूमि लोटैं॥
कहूँ मार नेजा दिए डारि केते नहीं प्रान छूटैं परे झुंड ओटैं।
मनौ जीव पापीन कौं जम्मराजा दियौ दंड सोई सबै धूम घोटैं(?)२५

खेलत सिकार झारखंड मैं अलाउदीन,
मारत मृगनि मृगनैनी लिए संग मैं।

(?) जहां जहां अर्थ में संदेह है वहां वहां (?) ऐसा चिह्न बना दिया गया है।

बेगम महति मरहट्ठी * माहताब जैसी,
जागति जुन्हाई जाके जोबन-तरंग मैं ॥
देख्यौ तिन तहाँ मीर महिमा मँगोल † कहूँ,
काम तैं सरस अभिराम रूप रंग मैं ।
हाय मिलै कैसैं या कराह मुख लागी दुख,
लाग्यौ देन अमित अनंग अंग अंग मैं ॥२६॥

लाग्यौ मन मीर सौं न धीर धर्यौ जात उर,
भूली सी फिरति दुख कासौं कहै गात कें ।
चित चटपटी अटपटी सब बात घात,
बनत न एकौ जात बनत न लात कें (?) ॥
हेर्यौ तहाँ हरिन कुलंग ‡ करि कूद्यौ एक,
ताही समै साहसीक साहसनि मात कें (?) ।

---

* मरहठी बेगम से यदि कमलादेवी समझें तो कालविरुद्ध पड़ता है; क्योंकि कमलादेवी रणथंभगढ़ की लड़ाई के पश्चात् पकड़ी गई थी। पर यह संभव है कि अलाउद्दीन पादशाह होने के पहले दक्षिण गया था तब कोई सुंदर मरहठी स्त्री वहाँ से लाया रहा हो और उसने उसे अपनी बेगम बना लिया हो।

† अलाउद्दीन, मीर मुहम्मद मंगोल नामी सरदार से अपनी बेगम से गुप्त व्यभिचार करने के संदेह पर क्रुद्ध हो गया था। वह डर से भागकर हम्मीरदेव की शरण में चला गया था। उसी के कारण लड़ाई हुई। कवि उसी को महिमा मंगोल के नाम से लिखता है।

‡ चौकड़ी भरकर।

तुरत तुरंग करि तातौ ताहि ताजन* दै,
फफकि फँदाइ दियौ बाहर कनात के ॥२७॥

हेरत फिरत हरिन कौ ज्यौं हरिननैनी,
देख्यौ महिमा मँगोल ताके पास जाइ कै ।
मारे दृग बान तानि भृकुटी कमान करि,
घायल निदान कह्यौ नजर नचाइ कै ॥
एरे मीत मेरे मेरी पीर के हरनहार,
बार एक लीजै मोहिं उर सौं लगाइ कै ।
तपनि बुझाइ दिल दुख मिटि जाइ नैकु,
सुख सरसाइ मिलि मोहिं हरषाइ कै ॥२८॥

मीर उवाच—सवैया

मीर कहै सुनि तू मरहट्ठो भई कछू बावरी बोलति कैसी ।
साहन कौ पातसाह बड़ौ सुलतान प्रिया तिनकी तुम ऐसी ॥
प्रीत करौ कि करौ कछु बैर बिचारत जौ यह बात अनैसी † ।
डारि है मारि निकारि है मोहिं कहूँ सुनिहै जो कही तुम जैसी ॥२९॥

दोहा

मरहट्ठी पुनि यौं कह्यौ, सुनौ मीर मंगोल ।
पातसाह की नारि मैं, मेरे बचन अडोल ॥३०॥

---

* ताज़ियाना—कोड़ा ।

† अनुचित, बेढब ।

कै मेरो कहिबो करहु, कै अब होहु उदास ।
बिन मेरे उर सैं लगैं, तुम्हैं न जीवन आस ॥३१॥
यह सुनि मीर ससंक चित, भरी बाम निज अंक ।
सुख मोटनि लूटनि लगे, जनु पाई निधि रंक ॥३२॥
जुगल रसीले रसबिवस, सुधि भूली सब और ।
तब आयो तिनके निकट, सेर एक तिहिँ ठौर ॥३३॥
प्रेम पास करि बँधि रह्यौ, चलन न पायौ चीर* ।
सेर सँघारयौ ठौरहीं, मीर एकही तीर† ॥३४॥

त्रिभंगी छंद

करि कै मनमानें अति सुखसाने जात न जाने जाम घरी ।
उठिकै पुनि सारे बसन सँवारे भूषन धारे रूपभरी ॥
लखि साज समाजैं रतिपति लाजैं अस्तर साजे भाँति भली ।
मिलि कै निज मीतैं हय रन जीतैं चढ़ि बर भामिनि फेरि चली ॥३५॥
चढ़िकै जब नट्टी नारि मरट्टी मीर पलट्टी बाग तहीं ।
कहि सुनिए प्यारी कौतुकवारी बात न काहू पास कहीं ॥
सुनि हय मग डारे चाप सुधारे होत सिकारे धूम जहाँ ।
तिनसों मिलि डोलैं करैं कलोलैं गरबित बोलैं बाम जहाँ ॥३६॥

* इस प्रकार की पूर्वकालीन क्रिया का शुद्ध रूप व्रजभाषा में इकारांत होता है। परंतु तुकांतों में प्रायः कवियों ने उसका अकारांत प्रयोग भी कर लिया है ।

† ३१, ३२, ३४, ३५, अंक में नेक अश्लीलता के कारण कुछ पाठ बदल दिया गया ।

सवैया

खेलिकै साह सिकार मुरयौ हरमैं सब साथ सुहातिं ललामैं ।
खूब खुस्याल खुले हियरे करतीं हँसि हेरि करोर कलामैं ॥
लै सुलतान को मंदिर मैं अपने अपने मिलि लागि गला मैं ।
देतिं ममारखो * बारहिं बार करैं सिगरी सब ओर सलामैं ॥३७॥
सुंदर मंदिर मैं सिगरी मिलि सेज सजी सब भाँति सुहाई ।
सोहै जहाँ सुलतानसिरोमनि साह सदा सबकौ सुखदाई ॥
गावति एक बजावति बीन प्रबीन लिए इक तास तहाँई ।
बैठ्यौ बिनोद भरयौ दिन दूलह कंत दिली को दिमाक† सवाई ॥३८॥

चौपाई

चहुँ दिसि करैं चँवर छबिबाढ़ीं । लीन्हे एक मोरछल ठाढ़ीं ॥
एकै हँसैं हँसावैं एकै । सहित अदाब‡ जातिं ढिए एकै ॥३९॥
साहैं निरखि सबनि सुख ऐसें । चंदहिं चाहि चकोरिन्हि जैसें ॥
इहिं बिधि सदा संग सब बामैं । पातसाह नित करत अरामैं§ ॥४०॥
इक दिन साह अलाउद्दीन । सैनसदन सोवत परवीन ॥
संग मरहठी बेगम सोवै । रतिपति संग मनो रति होवै ॥४१॥
काम कला प्रगटी उर सोवत । उठ्यो साह तिय को मुख जोवत ॥
जब आनंदसरस रसपागे । निकस्यो एक सुमूषक आगे ॥४२॥

---

* मुबारिकी, बधाई ।
† दिमाग, गौरव ।
‡ आदाब—विनय नम्रतादि परिपाटीयुत ।
§ आराम = सुख, विहार ।

खरभर सुनत भए उठि ठाढ़े । सिथिलित अंग भंग सुख गाढ़े ।।
गहि कमान छाड़े सर चारि । मूस मारिकै दीन्ह्यो डारि*।।४३।।

दोहा

हाजिर पास खवास जे, जे नाजिर † सब धाम ।
सब मिलि देतिँ ममारषो, झुकि झुकि करैँ सलाम ।।४४।।
जियौ बहादुर चारि जुग, साह अलाउद्दीन ।
यह सुनि कै सनमुख हँसी, मरहट्ठी मतिहीन ।।४५।।
पातसाह पूछ्यौ बहुरि. कहु हँसिबे कौ हेत ।
हाथ जोरि परसति पगनि, प्रगट न उत्तर देत ।।४६।।
पातसाह जब हठ परयौ, नैन तरेरे जान ।
कह्यौ आज पिय माफ करि, करिहौं अरज बिहान ।।४७।।
लिखि कागद ‡ कर मैं दियौ, खोजा§ एक पठाइ ।
कहि महिमा मंगोल कौ, भोर होत भजि जाइ ।।४८।।

सवैया

नाजिर आनि दियो कर कागद भाजु कही उठि देर न लावै ।
खोल खलोतौ लिख्यौ यह बाँचत भाजियौ राति न बोतन पावै ।।

---

* ४२ वेँ अंक की तीसरी तुक और ४३ वेँ अंक की दूसरी तुक में भी पाठ बदल दिया गया है ।

† नाजिर = वह मुख्य परिचारिका जिसके हाथ में अंतःपुर के प्रबंध रहते हैं ।

‡ कागज ।

§ पातशाहों के महलों के संरक्षणार्थ हीजड़े नियत किए जाते थे । वे लोग खोजे अथवा ख्वाजःसरा कहलाते थे ।

मीर तुरंग मँगाइ तुरंत भयौ असवार विचारत जावै ।
जाउँ कहाँ किहिँ के ढिग मैं इहिँ औसर मैं मोहिं कौन बचावै ॥४९॥

कवित्त

बाजी-खुर-धारनि पहार करै छार गढ़,
गरद मिलावै जोर जंगनि जकत है ।
ल्यावै आसमान तैं पताल तैं पकरि,
पारावार तैं कढ़ावै थाह लेत न थकत है ॥
संक न करत लंकपति सौं जुरत जंग,
जोहि कै जमात-जम छोभनि छकत है ।
काल तैं कराल या अलाउदीन पातसाह,
ताकौ चोर चारौं ओर राखि को सकत है ॥५०॥

सवैया

सोचत मीर चल्यौ मग जात लखै नहिँ ठौर कहूँ सरने कौं ।
जाउँ जहाँ जिहिँ के ढिग सो न सकै छिन राखि डरै लरने कौं ॥
एक यहै रनथम्भ कौ खम्भ अहै चहुँवान अजौं अरने कौं ।
दंड भरै न हमीर हठी हर बार जुरै न मुरै मरने कौं ॥५१॥

दोहा

तब आयौ रनथंभ मैं, चलि महिमा मंगोल ।
लखि रचना गढ़कोट की, भयौ अडोल अबोल ॥ ५२ ॥
जब भीतर कौं पग दियौ, तब बोले दरबान ।
कित तैं आए कौन तुम, उहाँ न पैहौ जान ॥ ५३ ॥

मीर मंगोल उवाच—भुजंगप्रयात छंद

कहाँ धाम है बीर हम्मीर केरौ । उहाँ जाइबे कौ बड़ौ काम मेरौ ॥
अरे बीर मैं मीर मंगोल भाखौ । बचैं प्रान मेरे उहाँ मोहिं राखौ ५४
सुनी प्रान के राखिबे की जु बानी । दुरै आनि पीछैं यहै बात जानी ॥
गहैं बाहँ एकै मिलैं औ जुहारैं* । कहैं पुन्य के पाहुने हौ हमारैं ५५
लगे अंग एकै गए संग लागे । जहाँ बीर हम्मीर के धाम आगे ॥
गए भूप के भौन मैं और दौरे । तहाँ आनि आगे दुवौ हाथ जोरे ५६

दरबान उवाच—दोहा

हिंदधनी हिम्मतधनी, हौ नृप समर अडोल ।
मीर सरन तेरी परौ, है महिमा मंगोल ॥ ५७ ॥
भूप बुलायौ आपु ढिग, तब आयौ तहँ मीर ।
हाथ जोरि ठाढ़ौ भयौ, बोलत बचन गँभीर ॥ ५८ ॥

मीर उवाच—सवैया

बात बनी न कछू हमसौं तिहिं कारन तैं सुलतान रिसाने ।
डारिहैं मारि बिचारि यहै तुरतै तिहिं ठौरहिं छोड़ि पराने ॥
बीर बली चहुँवान सुनौ रनथंभ के थंभन आप बखाने ।
प्रान के राखनहार निहारि कै आनि परे सरनैं सब जाने॥५९॥

दोहा

मैं आयौ तेरी सरन, तू अब लेहि उबारि ।
उभै लोक तेरौ विमल, जस गैहैं जुग चारि ॥ ६० ॥

---

* सादर प्रणाम करते हैं ।

भुज फरकत हरषत सुनत, सरनागत की बात ।
बोले बिहँस हमीर तब, उमग न गात समात ॥ ६१ ॥

हम्मीरदेव उवाच—छप्पय

उवै भानु पच्छिम प्रतच्छ दिन चंद प्रकासै ।
उलटि गंग बरु बहै काम रति प्रीति बिनासै ॥
तजै गौरि अरधंग अचल ध्रुवआसन चल्लै ।
अचल पौन बरु होइ मेरु मंदर-गिरि हल्लै ॥
सुरतरु सुखाइ लोमस मरै मीर संक सब परिहरौ ।
मुख बचन बीर हम्मीर को बोलि न यह बहुरौ टरौ ॥६२॥

खसै भानुबिम्मान बिकल तारा ससि झंपै ।
अचल अवनि असमान दसौ दिसि थरथर कंपै ॥
गज्जै घन घनघोर जोर मारुत सब चल्लै ।
संकरषन* फुंकरै काल हुंकरै उतल्लै ॥
मरजाद छोड़ि सागर चलै कहि हमीर परलै-करन ।
आलाउद्दीन पावै न तौ मैं मँगोल राख्यौ सरन ॥६३॥

दोहा

मंत्री बहुरि मुसाहिबनि, बहुत कह्यौ समुझाइ ।
पै हमीर राख्यौ सरन, सीस रहै कै जाइ ॥ ६४ ॥

---

* शेषनाग ।

राजा उवाच

धड़ नच्चै लोहू बहै, परि बोलै सिर बोल ।
कटि कटि तन रन में परै, तौं नहिं देहुँ मँगोल ॥६५॥

पुराना दोहा

"सिंह-गमन सुपुरुष-वचन, कदलि फलै इक बार ।
तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार"* ॥६६॥

पद्धरी छंद

इहि भाँति मीर महिमा मँगोल । जब गयौ भाजि सरनै अडोल ॥
तब पातसाह आलाउदीन । पुनि रोज दूसरे खबर लीन ॥६६॥
बैठ्यौ इकंत इक ठौर जाइ । तहँ लीन तानै तरुनी बुलाइ ॥
तेहिं आइ तुरत कीन्ही सलाम । अति रूपवंत मरहठी बाम ॥६७॥
सनमुख निहारि पुनि नैन मोरि । बैठी समीप जुग हाथ जोरि ॥
जब रही और कोऊ न पास । रहि गईं चारि हाजिर खवास ६८

---

* चंद्रशेखर जी की प्रति में यह दोहा इसी भाँति लिखा है । पर इसके दोनों तुकांत में 'बार' पड़ता है । बाबू हरिश्चंद्र ने इस दोहे को यों छापा है 'सिंह सुवन सुपुरुष बयन कदलि फलै इस सार । तिरिया तेल हमीर हट चढ़ै न दूजी बार' । पर इस पाठ में पहले चरण के अंत में इस सार आता है । 'इस' शब्द पुरानी भाषा में प्रचलित कम था । पाठ में कुछ गड़बड़ अवश्य है । यदि "कदलि फलत इक सार" यों पाठ बदला जाय तो सार्थक हो जाय ।

तब पातसाह तेहिं ओर देषि । वह बात बहुरि पूछी विसेषि ॥
अति चतुर आप आलाउदीन । हँसि हेरि बैन बोले प्रवीन॥६९॥

पातसाह उवाच

सुनि नारि तोहिं पूछौं बहोरि । तुम करत केलि मुख लियो मोरि॥
पुनि मोहिं तीर मारत निहारि । या हँसी कहा मन मैं बिचारि ७०

बेगम उवाच—दोहा

लै हरमैं सब संग मैं, सजि सिकार कौ साज ।
जिहि दिन जंगल में गए, आप गरीब-निवाज ॥७१॥
मीर परयौ मेरी नजर, खेलत तहाँ सिकार ।
मेरैं लागे मदन-सर, मोहिं न रहा सँभार ॥७२॥
मैं तुरंग तातौ कियौ, तुरत गई तिहिं पास ।
सुख समूह अतिसय लह्यौ, आनँद सहित हुलास ॥७३॥

सोरठा

आवत सेर निहारि, गहि कमान इक तीर लै ।
मीर सु डारयौ मारि, भयौ सिथिल नहिं संक तैं ॥७४॥*
मारयौ चूहौ आप, दई बधाई सबनिहीं ।
या सूरता अमाप, दृगनि देखि बाढ़ी हँसी ॥७५॥

---

* ७३ वें अंक का दूसरा तुक और ७४ वें अंक का दूसरा तुक भी कुछ कुछ बदल दिया गया है ।

पद्धरी छंद

यह सुनत चढ़ीं भौंहैं कमान । दृग विषम बान से लिए तान ॥
उठि आमखास* बैठ्यौ सु आइ । हाजिर हजूर सब भए धाइ ॥७६॥
यह आप हुकुम दीन्यौ सुनाइ । महिमा मँगोल की खबर ल्याइ ॥
है कहाँ खोजि करि लेहु अंत लीजै मँगाइ ताकौं तुरंत ॥७७॥
जानत सु एक तहँ रह्यो कोइ । कर जोरि अरज करि उठ्यौ सोइ ॥
साहानसाह आलम निवाज† । रनथंभ कोट चहुँआन राज ॥७८॥
हम्मीर देव हिम्मत-उदार । संग्राम सिंधु थाहत अपार ॥
महिमामँगोल ताकी पनाह । बैठ्यौ अडोल तिन गही बाँह ॥७९॥
बरु उलटि गंग पच्छिम बहाइ । चूकै न बोलि चहुआन राइ ॥
सुनि कियौ कोप आलाउद्दीन । मोल्हन‡ बुलाइ यह हुकुम कीन ८०

पातसाह उवाच

चढ़ि तू तुरंत रनथंभ जाइ । हम्मीर देव चहुँआन राइ ॥
कहियौ बुझाइ गढ़बो गँवार । मत हो पतंग पावक मँझार ॥८१॥
महिमा मँगोल दीजै निकारि । पुनि सहित दंड देवलकुमारि ॥
दीजै तुरंत दिल्ली पठाइ । मत बैर आप हाथनि बढ़ाइ ॥८२॥
मोल्हन सलाम कीन्ही बहोरि । उठि चल्यौ सामुहैं हाथ जोरि ॥
घोड़े हजार इक साथ आन । रनथंभ-ओर कीन्ह्यौ पयान ॥८३॥

---

* राजसभा ।
† जगत्पालक ।
‡ मोल्हनदेव ।

हिंदू अनेक बहु मुसलमान । गहि अस्त्र सस्त्र सज्जित जवान ॥
मोल्हन उजीर पहुँच्यौ तुरंत । रनथंभ-कोट देख्यौ अगंत ॥८४॥
पुनि गयौ कोट भीतर उजीर । ठहराइ पौरि पर और भीर ॥
साईस एक बाजी-सवार । चलि गयौ आप ड्योढ़ी अगार ॥८५॥

दोहा

आवत देखि उजीर कौ, अरज करी दरबान ।
ल्याइ बेगि हाजिर करौ, हरषि कही चहुआन ॥८६॥
तब उजीर हाजिर भयौ, मोल्हन माथ नवाइ ।
हाथ जोरि सनमुख तहाँ, बैठ्यौ आयसु पाइ ॥८७॥

सोरठा

लखि गढ़ रनथंभोर, मोल्हन करत बिचार मन ।
यह हमीर बर-जोर, कैसेहुँ कह्यौ न मानिहै ॥८८॥

दोहा

मोल्हन बदन मलीन लखि, साहसीक रनधीर ।
महाराज राजनि सिरे, बोले बचन गँभीर ॥८९॥

राजा उवाच—चौपाई

कहु मोल्हन आयौ केहिं काम । है तौ परम कुसल आराम ॥
पुनि हैं कुसल गेह में तेरे । जे अयान अरु बृद्ध घनेरे ॥९०॥
जो है दिल्ली तखतनसीन* । पातसाह आलाउद्दीन ॥

---

* सिंहासन पर बैठा ।

सो तौ है अनंद-सुख-सानौ। यह मोल्हन तुम मोहि बखानौ॥९१॥
सहित गुमान गरब आतंक। सुनि राजा के बचन निसंक॥
तब उजीर दोऊ कर जोरि। मोल्हन बोल्यो बचन बहोरि॥९२॥

उजीर उवाच—दोहा

महाराज सोई कुसल, सदा सहित परिवार।
पातसाह जापर करै, कृपा एक हूँ बार॥९३॥
मोहिं पठायौ आप पैं, साह अलाउद्दीन।
चहत अरज कीन्ही सु मैं, जो कछु आयस दीन॥९४॥

झूलना छंद

कही साह सल्लाह की बात मोसौं सुन्यौ भाजि आयौ इहाँ मीर खूनी।
इसी वास्ते आपने मोहिं भेजा उसे दीजियै बेग मंगाइ हूनी (?)॥
करौ साथ कुंवारि देवल्ल ताईं भरौ दंड बैठे करौ राज दूनी।
यहै बात मेरी कही मानि लीजै नहीं नक मैं होइगी राज सूनी ९५

राजा उवाच

कहै बीर चहुआन हम्मीर हट्ठी सुनौ साँच उज्जीर मोल्हन्न एरे।
गढ़ा मंडला* आदि उज्जैन सारी जिते कोट बंके तिते जानि मेरे॥
रहै साह राजी चहै बंब बाजी कहौं एक ना एक सौ आठ फेरे।
परौ मीर पाछें भरौ दंड डोला दिए जात नाहीं कहौं पास तेरे ९

---

* ये गढ़ों के नाम हैं।

मोल्हन उवाच

सुनौ बीर चहुँआन गुम्मान छोड़ौ अहंकार मैं जात संसार मारौ ।
असी लच्छ सावंत औ सूर प्यादे जहीँ साह गाजी चढ़ै सज्जि सारौ॥
डिगै मेरु डोलै मही भानु झंपै परै देखि आकास मैं चंद तारौ ।
डरै काल कुब्बेर सुरेंस कंपै किती बात तेरी कह्यौ कान धारौ ॥६७॥

राजा उवाच

चलै सेस डोलै मही मेरु हल्लै महारुद्र सो तीसरौ नैन खोलै ।
चहूँ ओर तोपैं चलैं बान छूटैं झकाझोर समसेर की मार बोलै ॥
उठैं रुंड भू मैं परे मुंड लोटैं भरैं कुंड लोहू बहे बीर डोलै ।
चले प्रान जावँ कटैं गात सारे टरै बात ना जौन हम्मीर बोलै ६८

मोल्हन उवाच

दुवौ जोरि के हाथ मोल्हन्न बोल्यौ सुनौ राइ चहुँआन या बात मेरी।
कही साह सो बेग मंगाइ दीजै यहै मंत्र नीकौ गुनौ लाख बेरी ॥
करै सामनौ कौन सुलतान आगे किसे काल कोप्यौ महा मीच घेरी ।
परै बाज सौ टूटि कै साह गाजी उड़ै रंक पंखी जिती ताव तेरी ६६

राजा उवाच—सवैया

मोल्हन बात न सो बदलै अब जो प्रथमैं मुख तैं हम काढ़ी ।
मैं अपने बल बैर कियौ कि न मोचु रहै सिर ऊपर ठाढ़ो ॥
दीन मुहम्मद को करि खीन मलीन करौं मुख की छबि बाढ़ी ।
कै सुलतान की सान रहै कै हमीर हठी की रहै हठ गाढ़ी ॥१००॥

मोल्हन उवाच—कबित्त

डोला भेजि दीजै जौन माँगत दिली को पति,
मोल्हन कहत सीख मेरी सीस धरु रे ।
माँगत मतंग सत सहस तुरंग पुनि,
महिमा मँगोल को मँगाइ संग करु रे ।।
जीवन जगत नर देही दुरलभ जानु,
जासौं बचै जीव सो जतन अनुसरु रे ।
दीपक के संग जैसैं जरत पतंग तैसैं,
जंग कै हमीर हठ धारी तू न मरु रे ।।१०१।।

राजा उवाच—सवैया

मोल्हन बोल सँभारि न बोलत बारहिं बार बिबाद बढ़ावै ।
जो गहि मारहुँ तोहिं इहाँ सुलतानहिं कौन जवाब सुनावै ।।
लोक करै अपलोक सबै जुग चारिहुँ दूत बध्यौ नहिं जावै ।
मैं अपनी अपकीरति के डर बात सहौं सब दैव सहावै ।।१०२।।

कबित्त

सकल अमीरनि के आगैं या सँदेसौ मेरो,
मोल्हन सुनाइयौ अलाउदीन गाजी कौं ।
माँगत प्रथम गढ़ गजनी* हमीर फेरि,
दीजै अलीखान† सो सहीस निज बाजी कौ ।।

---

* गजनी का किला ।

† कवि ने पादशाह के बेटे का नाम अलीखाँ कल्पित किया है । वह नाम पादशाह के किसी बेटे का नहीं था । अलाउद्दीन के भाई का

दीजै भेजि हरम हजूर मरहट्टी बेगि,
चाहियै जो कुसल तखत सिरताजी कौं ।
तुम से मिलैं जो पातसाह पाँच और तौ,
हमीर गढ़-चक्कवै चहत रनसाजी कौं॥१०३॥

दोहा

सुनि मोल्हन चहुँआन के, अचल बचन डरहीन ।
सिर नवाइ माँगी बिदा, तब नृप आयसु दीन ॥१०४॥
बिदा भयौ आयौ तुरत, दिल्लीपति के धाम ।
हुकुम पाइ भीतर गयो, सब मिलि कियौ सलाम ॥१०५॥
पातसाह पूछन लगे, कहु कैसौ बिरतंत ।
हाथ जोरि सिर नाइ कै, मोल्हन अरज करंत ॥१०६॥

मोल्हन उवाच—कबित्त

आलमनिवाज सिरताज पातसाहनि के,
गाज तैं दराज कोप-नजर तिहारी है ।
जाके डर डिगत अडोल गढ़धारी,
डगमगत पहार औ डुलति महि सारी है ॥
रंक जैसौ रहत ससंकित सुरेस भयौ,
देसदेसपति मैं अतंक अति भारी है ।
भारो गढ़ जारी सदा जंग की तयारी धाक,
मानै ना तिहारी या हमीर हठधारी है ॥१०७॥

नाम अलग खां तो अलबत्तः था। स्यात् उसी नाम को भूल से कवि ने अलीखाँ कर लिया हो तो आश्चर्य नहीं ।

छप्पय

हुकुम न मानै एक मीर मंगोल न देवै !
डोला दंड न देइ कहै नहिं आवन सेवै ॥
माँगै उठत रिसाइ नैन राते करि हेरै ।
धरै मुच्छ पर हाथ बहुरि निरखै समसेरै ॥
मारयौ न मोहिँ अपजस डरनि अति गढ़पति गाढ़ौ अहै ।
चहुँआन धनी रनथंभ कौ खंभ रोपि जूझन कहै ॥१०८॥

माँगै बैठ्यौ आप बहुरि तुमसौं सुनि लीजै ।
अलीखान कौं भेजि नारि मरहट्टो दीजै ॥
गढ़ गजनी दै देहु खैर तब दिल्ली जानौ ।
यह सँदेस मुख आप राइ चहुँआन बखानौ ॥
सुनु पातसाह मोल्हन कहै जुद्ध हेत सनमुख खरौ ।
निरसंक संक मानै न कछु आप कोटि उद्यम करौ ॥१०९॥

यह जबाब साहानसाह आलमनिवाज सुनि ।
कियौ कोप मुख चढ़ी ओप औरै अनूप पुनि ॥
दियौ हुकुम सावंत सूर सेना सँवारि सब ।
अस्त्र सस्त्र सबकौं लाइ बकसौ तुरंत अब ॥
हय बर मतंग तोपनि सहित करिय कूच* आरंभ कौ ।
मारौ हमीर डारौ उलटि कोट कठिन रनथंभ कौ ॥११०॥

---

* प्रस्थान ।

दोहा

कोपि साह सेना सजी, प्यादे हय गज मत्त।
सजे सूर सावंत सब, सुमुख समर अनुरत्त ॥१११॥

कबित्त

चंचल चलाँके बेगवंत बर बाँके बंक,
ताक आसमान जे कसत करि (?) तंग के।
सोहत असीले हेम हीरन सजीले,
गरबीले गुनआगर सजीले अंग अंग के॥
माखैं मन समर सपूती अभिलाखैं लाल,
आँखैं करि लखत उमंग अंग जंग के।
ताजी तेज लच्छी पौनपच्छी से उड़ात सजे,
कच्छी पातसाह के सुलच्छी रंग रंग के॥११२॥
कारे कद* भारे भीम दीरघ दँतारे जौन,
जलधरधारैं ज्यौं फुहारैं फुफुकारैं ते।
चूमैं चंदमंडल उदंड सुंडदंडनि सौं,
कुंडनि ज्यौं सोखैं सिंधु सलिल अपारे ते॥
पगनि धरत मग धरनि धुजावैं धूरि,
लावैं निज ऊपर अतोल बलधारे ते।
प्यारे श्री अलाउदीन पातसाह वारे,
पीलबाननि सँवारे ये मतंग मतवारे ते॥११३॥

---

* काया, आकार।

भुजंगप्रयात छंद

जरीदार बन्नात की झूल झंपैं। सिरी चंद सौं सुंड औ मुंड ढंपैं ॥
अँबारी कसी हेम की लाल ऐसी। मनौ मेरु पै मंडपी भानु कैसी ११४
सजे सूर सावंत जे सस्त्रधारी। लसैं अंग संग्राम की साज सारी॥
धरे टोप कुंडी*कसे कौच अंगं। झिलिम्मै†घटाटोप पेटी अभंगं ११५
लिए खग्ग खंडा प्रचंडा दुधारे। तमंचे छुरी सेल नेजा सँभारे ॥
लिए चाप तूनीर में तीर पूरे। चले साह के संग में जंगसूरे ११६
मतंग मँगायौ चढ़यौ साह गाजी। चढ़े सूर सावंत औ बंब बाजी॥
जुझाऊ बजैं राग मारू अलापैं। चढ़ैं रंग बीरं सुनें कूर काँपैं ११७

दोहा

दस सहस्र सावंत अरु, धवल‡ सूर बहु लीन।
असी लक्ख पायक सहित, चढ़यौ अलाउद्दीन ॥११८॥

कवित्त

साजि चतुरंग बीररंग ह्वै मतंग चढ़ि,
चलत अलाउद्दीन दीन अरजत हैं।
धाई धाम धाम धूम धौंसा की धुकार धूरि,
धाराधर धावत धरा पैं गरजत हैं॥
ऐल परी गैल मैं मतंग मतवारनि की,
भीड़ अड़त अडैलनि तुरंग तरजत हैं।

---

* टोप कुंडी सिर की रक्षा के निमित्त पहने जाते थे।

† लोहे की कड़ियों का गूथा हुआ अंगत्राण।

‡ धवल का अर्थ संदिग्ध है। सबल पाठ ठीक जँचता है।

धावत प्रबल दल धूजत धरनि फन,
फुंकरत फूरत फनीस लरजत हैं ॥११९॥
तहाँ तज्जत तुरंग गल-गज्जत गयंदगन,
बज्जत निसान धुनि धावत दराज।
सुनि धुक्कत धरनि मद मुक्कत महीप सब,
सुक्कत सुरेस सुर सहित समाज॥
पुनि कंपति पुहमि रबि झंपत गरद चलि,
चंपत प्रबल दल दीरघ दराज।
मुख राजत सुरंग चढ़ी अंगनि उमंग,
जबसाजि चतुरंग चढ़्यौ साहि-सिरताज ॥१२०॥
चलि छार से करत खुर थारनि पहार अति,
तायल तुरंगम उड़त जनु बाज।
गिरि विंध्य तें बिलंद मद झरत मदंध दूरि-
ही तें दिगदंतिन दलत गजराज॥
जोर ठौर ठौर होत गज घंटनि के सोर घोर,
धौंसा की धुकारनि परत जनु गाज।
छबि छैल सूरबीरगन दीरघ दराज दल,
साजि चतुरंग चल्यौ साहिसिरताज ॥१२१॥

चौपाई

कियौ कूच साहनि सिरताज। साह अलाउदीन सजि साज॥
चला प्रबल दल दारुन ऐसैं। उमड़त सिंधु प्रलय मैं जैसैं १२२
बाजे बहुत जुझाऊ बाजे। सुनत विरद्द बीर गलगाजे॥

जात नचावत चपल तुरंगा । कसे सस्त्र सोहत सब अंगा १२३
मग डोलत मतंग मतवारे । गरबवंत गिरि ढाहन-हारे ॥
चला कटक केहि भाँति बखानौं । पावस घन घुमंडि नभ मानौं १२४
अस्त्र सस्त्र चमकत बहु भाँती । बिज्जुछटा छूटत जनु जाती ॥
धमक धूम धौंसनि की ऐसैं । गरजत गगन घोर घन जैसैं १२५

दोहा

पातसाह रुख पौन रुख, दल बद्दल समुदाइ ।
घेरेउ गढ़ रनथंभ गिरि, इमि चारयौ दिसि जाइ ॥१२६॥
ज्यौं सकोप सुरपतिपुरी, बलि घेरी करि जोर ।
पातसाह त्यौं कोप करि, घेरयौ रनथंभोर ॥१२७॥
चहूँ ओर डेरा परे, खाई ओट प्रहार ।
भटभेरा नेरा रहा, भरि गोली की मार ॥१२८॥

चौपाई

ठाढ़ौ सुरुख मखमली डेरा । लसत कनात सुरुख चहुँ फेरा ॥
तनी चाँदनी राजति भारी । झुकति झालरैं मोतिनिवारी॥१२९॥
बैठ्यौ तहाँ साहसिरमौर । सनमुख खरे दूरि सब ओर ॥
बैठे सस्त्र अस्त्र कर धारी । प्रथम पौरि पर रच्छक भारी ॥१३०॥
गहगह नौबत बाजति आगे । निज निज काज करन सब लागे ॥
सूर बीर उतरे सब ठौर । करत बिचार देखि गढ़ और ॥१३१॥
सावधान डेरा करि लीन्हे । बहुरि जंग हित उद्यम कीन्हे ॥
दल मैं दीन्यों हुकुम पुकारि । अस्त्र सस्त्र सब धरो सँभारि॥१३२॥

दोहा

बढ़ि बढ़ि बाँधे मोरचे, लाग देखि नियराइ।
तीर तुपक की मार मैं, तोपैं दईं लगाइ ॥१३३॥
देखि कटक चहुँआन कौ, तुरत खबर करि दीन।
गढ़ घेरयौ सुनि हिंदपति, साह अलाउद्दीन ॥१३४॥
तब हमीर देख्यो कटक, कोट निकट चहुँ ओर।
जैसैं सावन मैं घुमड़ि, नभ घेरत घन घोर ॥१३५॥

सोरठा

बैठो बिहँसत बीर, मीर राखि निज सरन मैं।
पातसाह की भीर, मैं हमीर मारौं सकल ॥१३६॥
जहाँ नृपतिसिरमौर, तहँ आयो मंत्री चतुर।
माथ नाइ कर जोरि, करत अरज भूपति सुनौ ॥१३७॥

चौपाई

पातसाह करि कोप कराल। साजि कटक आयौ ततकाल ॥
घेरेउ कोट हुकुम परचंड। मीर सरन अरु माँगत दंड ॥ १३८ ॥
जौ न देहिं तौ होत बिनास। दीन्हे बड़ौ जगत मै हाँस ॥
दोऊ भाँति बात यह ऐसी। साँप छछूँदर की गति जैसी ॥१३९॥
बिग्रह मैं कछु भलौ न लेखैं। खाली सुलह होत नहिं देखैं ॥
महाराज दीजै फरमाइ। ताकौ तुरतै करैं उपाइ ॥ १४० ॥

दोहा

भुज फरकत हरखत हियैं, बिहँसत बदन हमीर।
फेरि हेरि समसेर दिसि, बोले बचन गँभीर ॥१४१॥

राजा उवाच

गौरि संभुतनु परिहरै, अचल मेरु चल होइ।
बोल्यो बचन हमीर कौ, चलनहार नहिँ कोइ ॥ १४२ ॥
सिंधु चलै मरजाद तजि, उलटै अवनि अनंत।
बोल्यौ बोल हमीर कौ, सो नहिँ बहुरि चलंत ॥ १४३ ॥
सरनागत पालन करै, अरु बरतै सुचि नीति।
समर सस्त्र सनमुख सहै, यह छत्रिनि की रीति ॥ १४४ ॥
लखि दीननि कौ दुख हरै, करै प्रजा पर प्रीति।
प्रान तजै पर काज कौँ, छत्री समर अजीत ॥ १४५ ॥

कबित्त

संकट सुरेस को जथारथ निरखि देह,
दीन्ही है दधीचि पर स्वारथ प्रमान कै।
करुना कपोत की कहत सिविराज दए,
काटि काटि अंगनि तुला मैं तौलि दान कै ॥
दीन्ह्यौ सीस जगत जसीले जगदेव आज,
छत्री मैं हमीर कलि कीरति अमान कै।
प्रगट अकारथ मरन सबही को हमैं,
राखिवे सरन परस्वारथ प्रधान कै ॥१४६॥

सवैया

जात मरे मरिहैँ जगजीव जिते धरि देहँ धरा पर आवैँ।
अम्मृत पान कियौ न कोऊ यह जानि लई निहचैँ सब भावैँ॥

है रन तीरथ छत्रिन कौं पर स्वारथ की परबी कहँ पावैं ।
मानि जथारथ बात लरौ कलि मैं कबि कोबिद कीरति गावैं १४७
कोटिनि काटि कटारिनि सौं तरवारिनि मारि करौं घमसानैं ।
सुंड-बिहीन बितुंड परैं रनरुंड फिरैं रज स्रोनित सानैं ॥
साह कौं देउँ पठै जमलोक हमीर हठी तब मोहिं बखानैं ।
कै अब सूरज-मंडल बेधि बसौं हरि कं पुर बैठि बिमानैं ॥१४८॥

दोहा

करो तयारी कोट मैं, सजौ जुद्ध कौ साज ।
मार देखि सीधी करौं, तेपैं प्रथम दराज ॥१४९॥
सावधान सब मिलि रहौ, सत्रु न आवै पैठि ।
करौं जुद्ध मन सुद्ध ह्वै, निज गढ़ ऊपर बैठि ॥१५०॥
तब दिवान सिर नाइकै, आयौ बहुरि तुरंत ।
बैठि बुलाए भूप के, सूर बीर सावंत ॥१५१॥
आइ जुहारे सुनतहो, गहि सब सस्त्र उदार ।
सावधान-संगर अचल, धरे सपूती भार ॥१५२॥
जो जेहि लायक ताहि तस, करि आदर सनमान ।
बहुरि सुनायौ भूप कौ, आयसु आप दिवान ॥१५३॥

चौपाई

भूप हुकुम दीन्हौ यह आज । साजौ सकल जुद्ध कौ साज ॥
साह सत्रु सिर पर चढ़ि आयौ । करियै कछुक तासु मन भायौ १५४

सुनि हरषे सब सूर घनेरे। उमँगे अंग अंग सब केरे ॥
भए अरुन मुख अति मन माषे। बलगत बचन बीरमुख भाषे१५५
कहौ कौन बिधि करहिँ लराई। मारैँ सत्रु समर बरियाई ॥
कटि कटि अंग धरनि गिरि जावै। पै रिपु जीवत जान न पावै १५६
तब प्रधान सिगरे सँग लीन्हे। गाढ़े सकल मोरचे कीन्हे ॥
लगे बीर सब निज निज थानैँ। चहूँ ओर तैँ चढ़ी कमानैँ १५७॥
गुरदा * चदर † गंज-गुबारे‡। लिए लगाइ तीरकस§ भारे ॥
तोपैँ दईँ फेरि अति भारी। मंदर मेरु ढहावन-हारी ॥१५८॥
लिए तुपक जरजाल|| जमूरे¶। लै भरि भार बान बल पूरे ॥
गढ़ पर जुद्ध-साज सब साजे। बलगत बचन बीरबर गाजे१५९॥
सुनब सोर धुनि घोर कठोरा। खरभर परी साह-दल-ओरा ॥
उठि उठि सस्त्र सँभारन लागे। जहँ तहँ सकल सूर भय-पागे१६०
तुपक तोप जरजाल करारे। भरि भरि मारु गंजगुब्बारे ॥
चलीं तोप कछु जातिँ न बरनी। कंपत आसमान अरु धरनी १६१

---

* एक प्रकार की छोटी तोप।

† बहुत सी गोलियाँ अथवा लोहे के टुकड़े एक साथ तोप में भरकर चलाते थे। यह चदर कहलाती थी।

‡ बंब के गोले।

§ तरकश, तूणीर।

|| लोहे के तारों में बहुत से फल छुरी इत्यादि के बँधे हुए जो तोप में भरके छोड़े जाते हैं।

¶ एक प्रकार की छोटी तोप जो ऊँट पर से चलाई जाती है।

छप्पय

धूमधाम धुंधरित भूमि असमान न सुझ्झै।
मनु घुमंडि घन घोर दौरि दुहुँ ओर अरुझ्झै॥
तहँ तोड़े * चमकंत घोर घहरात घमंकैं।
चंड सोर चहुँ ओर सुनत धुवधाम धमंकैं॥
गरजंत मेघ तड़पै तड़ित बज्र सरिस गोला परैं।
आलाउदीन हम्मीर की मार परी तोपनि लरैं॥१६२॥

कबित्त

मार परी दुहूँ ओर विषम बिहद्द घोर,
ठौर ठौर गोली बान गोला बरसत हैं।
जैसैं प्रलै काल मैं फनी के फनामंडल तें,
फैले फूतकारनि फुलिंगै सरसत हैं॥
बरसैं अँगारे कैधौं टूटैं आसमान तारे,
कोटिनि कतारे केतुवारे दरसत हैं।
तोपैं औनि अंबर कों कठिन कराल मानौ,
रुद्रनैन ज्वालनि के जाल भरसत हैं॥१६३॥
कछू सूझत न पार परी मार बेसुमार, मढ़ी
भूमि आसमान धूमधाम घनघोर।
मनौ घुमड़ि घुमड़ि नभ घेरत उमड़ि घन,
गाजत दराज तोप बाजत बजोर॥

* बंदूक दागने के लिये बत्तियाँ जो सुलगती रहती हैं।

महताब* चमकंत रुचि रंजक उड़ंत,
तड़िता सी तड़पंत घहरंत करि तोर।
बरषंत तीर गोली दल बुँद नीर-धार परैं,
गाज तैं दराज गुरु गोला ठौर ठौर ॥१६४॥

भुजंगप्रयात छंद

दुहूँ ओर सौं घोर यौं तोप बाजैं। प्रलैकाल के से मनो मेघ गाजैं॥
हलै मेरु डोलै मही सेस कंपै। उठी धूमधारा धुजै भानु झंपै १६५
भई बान बंदूक की मार भारी। मनौ बारिधारा महामेघवारी॥
उड़ै सोर† प्याले निराले चमंकैं। घटाजोट मैं दामिनी सो दमंकैं १६६
लगैं कोट मैं आनि कै जोर गोला। न पाषान टूटै कहूँ एक तोला॥
जहाँ साह की फौज मैं आनि लागैं। उडैं केतिकौ केतिकौ दूरि भागैं १६७
लगैं बान गोली गिरैं सूर ऐसै। गिरह खात पंछी गिरह बाज जैसै।
परी मार ऐसी दुहूँ ओर भारी। परे साह की फौज मैं खग्गधारी १६८
फटे टोप कुंडी तनंत्रान फूटे। कटे अंगअंगं नरं-प्रान छूटे॥
उठावंत एकै करैं एक जंगं। लुरे एक लोटैं परे अंग-भंगं १६९

दोहा

होत जुद्ध अति क्रुद्ध ह्वै, लरत सुभट रनधीर।
तहँ निसंक चहुँआनपति, देखत नाच हमीर॥१७०॥

---

* तोप दागने के लिये गंधक इत्यादि की बनी हुई बत्तियाँ जो जलती रहती हैं।

† शोरा।

बाजति ताल-मृदंग-धुनि, नाचति नटी नवीन ।
लसत बीर हम्मीर तहँ, राग-रंग-रस-लीन ॥१७१।

कवित्त

रचित रुचिर मनिमंदिर मैं राँच्यौ रंग,
नाचति सुगंध बार अंगना* निहारी है ।
मंजु मैनका सी मंजुघोषा सी सुरस भरी,
रंभा सी अनूप-रूप भूषन सवाँरी है ॥
ताल-गति तानैं लेति सात सुर तीन ग्राम,
भाव-भरी करति अलाप सुकुमारी है ।
पूरैं सम पायल करति झनकारी नाच,
देखत निसंक या हमीर हठधारी है ॥ १७२ ॥

सवैया

होति दुहूँ दिसि मार भयंकर तोपनि लोप चहैं करि दीनौ ।
नाचति बारबधू गढ़ पैं दल-बीच कुलाहल भूतनि कीनौ ॥
ताल मृदंगनि की धुनि होति सुनैं उतसाह करै मन हीनौ ।
बीर हमीर हियैं हरषै लखि मार भयौ सुलतान मलीनौ॥१७३॥

छप्पय

तीनि ग्राम सुर सात होत आलाप राग षट ।
लाँगडाँट सम बिसम तान उनचास-कूटि-बट ॥

---

* 'सुगंध बार अंगना' का कोई अच्छा अर्थ नहीं लगता । अतः 'सुगंधरब-अंगना' पाठ अच्छा जँचता है ।

नचत बार अंगना बजत मिरदंग ताल तहँ।
लख्यौ कोट ऊपर निहारि चहुँआनराज जहँ ॥
बैठ्यौ हमीर रनधीर अति निडर संक मानै न हिय।
आलाउदीन अंतक सरिस पातसाह मन कोप किय ॥१७४॥
चढ़े नैन भृकुटी कराल मुख लाल रंग करि।
दाबि दंत फरकंत अधर बलगंत क्रोध भरि ॥
करौं छार छन मैं पहार धरि कोट उलट्टौं।
दुवन देस दलमलौं दलनि देसनि दहपट्टौं ॥
मारौं हमीर पल मैं पकरि संक न यह मेरी करै।
आलाउद्दीन जानै न मोहिं गढ़ गँवार गाढ़ौ धरै ॥१७५॥

दोहा

पातसाह अति क्रोध करि, दीन्यौ हुकुम जरूर।
मुगलबेग उडियान कौं, हाजिर करौ हजूर ॥ १७६ ॥
हुकुम पाइ उडियान कौं, हाजिर कियौ तुरंत।
करि सलाम ठाढ़ौ भयौ, सूर निकट सावंत ॥ १७७ ॥
साह कह्यौ उडियान सौं, नाचत नटी निहारि।
ओट न एकौ देखियै, चोट तीर की मारि ॥ १७८ ॥

छप्पय

करि सलाम उडियान लई कर मैं कमान गहि।
प्रथम करी टंकार फेरि गोसा सँवारि तेहिं ॥
लियौ तीर तूनीर माहिं तीछन अति जोई।
रोदे फोंक जमाइ चाप सज्जित करि जोई ॥

तान्यौ कसीस भरि कान लगि बान बीच छाती हनौ ।
नाचंत नारि भू मैं परी चौंकि चमकि चपला मनौ ॥१७९॥

कबित्त

गुननि गहीली गति लेति गरबीली अंग-
अंग दरसावति उलटि पट ओट तैं ।
काम-अबला सी कला कोटिनि करति चंचला सी,
चित्त चोरति चलति लचि लोट तैं ॥
लाग्यौ बान छाती मैं अचानक विषम दृग,
कौंधा सौ चमकि चकचौंधा लग्यौ चोट तैं ।
हेम की छरी सी मंजु मोतिनि-जरी सी,
किन्नरी सी टूटि भूमि मैं परी सी परी कोट तैं १८०

दोहा

तरफराति तरुनी गिरी, सर मारयो उडियान ।
हरषि साह साबस कही, चकित भयौ चहुँआन ॥१८१॥

चौपाई

हरषे पातसाह मन माहीं । कियौ हमीर सोच लखि ताहीं ॥
प्रथम मंत्र मान्यो कछु नाहीं । हठ करि मंड्यो जंग वृथाही १८२
भयौ उदास संक कछु आनी । ऐसी बात मीर जब जानी ॥
आयौ तहाँ तुरत मंगोल । बोल्यौ हाथ जोरि मृदु बोल ॥१८३॥

मीर उवाच

महाराज राजनि सिरताज । भए उदास आप केहिं काज ॥
तुरत लेत बदलौ मैं देखौ । मरौ अलाउद्दीनहिं लेखौ ॥१८४॥

कह्यौ मीर कौ सुनि मनभायौ । धीरज बहुरि भूप-मन आयौ ॥
दिवस दूसरैं सोई रंग । लाग्यौ होन दुहूँ दिसि जंग ॥१८५॥
पुनि हमीर गढ़ ऊपर आयौ । सुरपति कैसो साज सजायौ ॥
अंग अंग प्रति भूषन साजै । निरखत कोटि काम-छबि लाजै१८६
उड़त चवँर चारों दिसि ऐसैं । सरदघटा रबि ऊपर जैसैं ॥
भूप भवन बैठ्यौ दरबार । दियौ नाच कौ हुकुम उदार ॥१८७॥
बहुरि नटी जब निरतन लागी । देखन लग्यौ भूप अनुरागी ॥
देखत साह कोप मन कीन्ह्यौ । कोट-कटा करिबे मन दीन्ह्यौ१८८
ताही समय तुरत उठि धायौ । लिए कमान तीर चलि आयौ ॥
हाजिर भयौ तहाँ पुनि मीर । कहे बचन मंगोल गँभीर ॥१८९॥

मीर उवाच

कहो आप उडियान सँघारौं । जासों जाइ सोच मिटि सारौ ॥
हुकुम होइ साहैं तकि मारौं । छन मैं छत्र भंग करि डारौं॥१९०॥

हम्मीर उवाच—दोहा

साह न मारत काठ कौ, जो खेलत सतरंज ।
उचित न यह जो डारियै, पातसाह प्रभु भंज ॥१९१॥

सोरठा

छोड़ि साह के प्रान, मारि और मेरौ हुकुम ।
महिमा गही कमान, सुनि आयसु चहुआन की॥१९२॥

दोहा

हाथ जोरि हम्मीर कहँ, महिमा गही कमान ।
अर्धचंद सर साधि कै, तानी कान प्रमान ॥१९३॥

वज्र सरिस छोरयो विषम, मीर तीर परचंड ।
पातसाह-सिर-छत्र कौ, दंड कियौ द्वै खंड ॥१९४॥
एक तीर सौं काटि कै, छत्र दियौ महि डारि ।
तब हमीर हरहर हँसे, सनमुख मीर निहारि ॥१९५॥

कवित्त

खंड ह्वै दु टूक परयो लूक सौ लपकि छत्र,
हूक सी समानी हियैं साह सोक सौं भरे ।
जोहत जके से चौंकि चलत थके से सबै,
सुकुर मनावत अमीर अतिहीं डरे ॥
आनि धरयौ आगैं बान सहित उठाइ हेम,
हीरनि रचित गजमुकता लसैं जरे ।
मानौं आसमान तैं नछत्रनि समेत परयौ,
भूमि मैं कलाधर सपूरन कला धरे ॥१९६॥
छत्र के परत सबही की छबि छीन भई,
दीन भयौ बदन अलाउदीन साह कौ ।
पीर उठी उर मैं अचानक अमीरन के,
धीरज धरै को धार धूजत सिपाह कौ ॥
सहमि गए से सबै सोचत ससंक कहैं,
खैर करी खालिक खुदाय सदराह कौ ।
भयौ तो दिली कौ पति देखत फनाह आज,
दाह मिटि गयौ तो हमीर नरनाह कौ ॥१९७॥

दोहा

पीर अमीरन कै उठी, धीर तज्यौ सुलतान ।
तुरत मँगायौ आप ढिग, छत्र सहित रिपुबान ।।१९८।।
सर मैं बाँच्यौ साह तब, गहौ बली कर अत्र ।
तिय बदलैं तेरौ कियौ, मीर भंग सिर छत्र ।।१९९।।
महिमा मीर मँगोल मैं, कर बर गही कमान ।
है दुरलभ अब आपकौ, जियत राखिबौ प्रान ।।२००।।

चौपाई

सर मैं लिख्यौ मीर को जौन । बाँच्यौ पातसाह जब तौन ।।
भयौ सपेद बदन दृग झंपे । डोलत दंत गात सब कंपे ।।२०१।।
करत बिचार और सब ठाढ़े । खरभर परी सोच मन गाढ़े ।।
पीर मनाइ कहत कर जोरी । बच्यौ साह साहब गति तोरी२०२
साह अलाउदीन सुलतान । करत बिचार छोड़ि अभिमान ।।
जुद्ध होत बीतें दिन एते । कटे कटक कहि जात न जेते।।२०३।।
अगनित सूर बीर सावंत । गज दुरंत औ सुतुर अनंत ।।
पैदल परे भूमि मैं लोटैं । लगीं बान गोली की चोटैं ।।२०४।।
तुपक तीर तोपनि की मार । बरषै मनौं मेघ जलधार ।।
गढ़ गाढ़ौ छूटब कठिनाई । नर पाथर की परी लराई ।.२०५।।

दोहा

कोट ओट गढ़पति लरैं, अंग न आवत घाव ।
दहपट्टत दल दूरि तैं, चढ़त चौगुनौ चाव ।।२०६।।

कटा होत दीसत नहीं, मारैं सकत न छूटि।
कोट कटक की मार मैं, गयौ सकल दल खूटि ॥२०७॥
छत्र भंग मेरौ भयौ, मरे सूर सावंत।
प्रान बचत दीसत नहीं, जानि लियौ बिरतंत ॥२०८॥

सवैया

वीर हमीर हियैं हरषै सर-गोलिनि की बरषा बरसावै।
जात मरे सिगरे रन सूर इतै उत एकौ मरौ न लखावै॥
काटि कै छत्र दियौ महि डारि लिख्यौ फिर पत्र प्रचारि सुनावै।
डारिहै मारि उबारिहै को मन सोंच यहै सुलतान कैं आवै २०९
मौन भए मन हीं मन मैं सुलतान बिचारत बात अनेकौ।
जौ लरियै मरियै इत तौ गढ़ की चढ़ि पैयत घात न एकौ॥
नाहक जात मरे सिगरे भट आवत हाथ लखात न एकौ।
लौटि चलौ अपने घर कौं जो भई सो भई कहि जात न एकौ २१०*
दीरघ सोच दिलीपति कौं दल छीन भयौ बलहीन मलीनौ।
सान गई अपमान अँगै निज प्रान बचै सोइ उद्यम कीनौ॥
हार लई अपनैं सिर मानि निदान यहै करि आयसु दीनौ।
लै अपनौ दल संग सबै उठि भाजि चल्यौ सहसा भयभीनौ ॥२११॥

कबित्त

मारे गढ़चक्कवै हमीर चहुँआन चक्र,
डारे गोल गरद मिलाइ मदमानी के।

---

* यदि इसकी पहली तुक यों बदल दें तो तुकान्त शुद्ध हो जाय,
"मौन भए मन ही मन साह बिचारत पै बनै बात न एकौ॥"

लोटैं रेत-खेत एकै पोटैं लेत देत एकै,
चोटनि समेत लड़े लाड़िले पठानी के ॥
सारे डर मारे राह बसन हथ्यार डारें,
बाहन सँभारै कौन भरे परेसानी के ।
भाजे जात दिल्ली के अलाउदीनवारे दल,
जैसे मीन जाल तैं परत दिसि पानी के ॥२१२॥
भागे मीरजादे पीरजादे औ अमीरजादे,
भागे खानजादे प्रान मरत बचाइ कै ।
भागे गज बाजी रथ पथ न सँभारैं पारैं,
गोलनि पै गोल सूर सहमि सकाइ कै ॥
भाग्यौ सुलतान जान बचत न जानि बेगि,
वलित बितुंड पै बिराजि बिलखाइ कै ।
जैसैं लगैं जंगल मैं ग्रीषम की आगि चलैं,
भागि मृग महिष बराह बिललाइ कै ॥२१३॥
भाजे जात रंक से ससंकित अमीर परैं,
भीरनि पै भीर धरैं धीर न रहैं थिरे ।
जंगल की जार मैं पहार मैं पराइ परे,
एकै बारि धार मैं उछार मारि कै परे ॥
कंपित करी पै साह साहब अलाउदीन,
दीनदिल बदनमलीन मन मैं खिरे ।
प्रबल प्रचंड पौन पच्छिमी हमीर मारे,
बद्दल समान मुगलद्दल उड़े फिरे ॥२१४॥

दोहा

भग्यौ प्रबल दल संग लै, दिल्ली कौ सुलतान।
हर्ष्यौ राय हमीर उर, गढ़ पर बजे निसान ॥२१५॥
आइ अरज मंत्रिनि करी, सुनिए राय हमीर।
हिंदु-धनी-हद आपकी, पत राखी रघुबीर ॥२१६॥
गयौ साह दिसि आपनी, रह्यौ हमारौ खेत।
ऐसैं सुजस सुपंथ मैं, ईस्वर सब कौं देत ॥२१७॥

चौपाई

जंग जीति जब लही हमीर। भागी पातसाह की भीर॥
ऐसी बात सुनी जब कान। रनमल नृपतिबंधु चहुँआन ॥२१८॥
सुजस भूप कौ सुनि मन माष्यौ। मन मैं कूर कपट अभिलाष्यौ॥
यह निहचय तब करी बनाइ। पातसाह कौं मिलियै जाइ ॥२१९॥
करी तयारी सुत लै संग। कछुक ब्याज करि चढ़्यौ तुरंग॥
भाज्यौ जात जहाँ सुलतान। पहुँच्यौ तहाँ तुरत चहुँआन २२०॥
हय तें उतरि पूत लै साथ। सनमुख चल्यौ जोरि जुग हाथ॥
गज समीप चलि गयौ बहोरि। करि सलाम बोल्यौ कर जोरि२२१

रनमल्ल उवाच—दोहा

सुनौ साह साहनि सिरे, तव सत्रुनि कौं साल।
मैं हमीर के बन्धु कौ, पुत्र नाम रनपाल ॥२२२॥
हाजिर भयौ हजूर मैं, हार सुनी जब कान।
अरज मानि मेरी मुड़ैं, अब ये फेर निसान ॥२२३॥

चलौ आप दैहौं तुरत, तिल तिल भेद बताइ ।
लाइ सुरँग छन एक मैं, दीजै गढ़ उलटाइ ॥ २२४ ॥
पातसाह सुनि अरज कौं, गरज आपनी हेत ।
सिरोपाव* दै सँग लियौ, रनमल पुत्र समेत ॥ २२५ ॥

चौपाई

रनमल साथ मुड़े सुलतान । बहुरि कोट दिसि गड़े निसान ॥
बहुरि मोरचेबंदी भई । खबर हमीर देव ढिग गई ॥२२६॥
सुनत उठ्यौ जनु सोवत जागि । उमड़ो अंग क्रोध की आगि ॥
मारौ यहै हुकुम करि दीन्ह्यौ । सूरनि अस्त्र सस्त्र गहि लीन्ह्यौ २२७
दुहूँ ओर तैं दारुन जंग । लाग्यौ होन भूरि भटभंग ॥
रनमल उहाँ भेद जो दीन्ह्यौ । पातसाह सो उद्यम कीन्ह्यौ ।२२८।
गढ़ मैं सोधि सुरंग लगाई । सत सहस्र मन दारू † पाई ॥
कियौ बहुरि ताकौं बलिदान । महिष एक सत नर इक आन ।२२९।
दई आगि तब उड़ी सुरंग । सहित कोटि गिरि कीन्यौं भंग ॥
उड़्यौ कोट दारू कैं जोर । भयौ भयंकर दारुन सोर ॥२३०॥

छप्पय

धूमधार धुंधरित धूरि धुंधरित धामधुव ।
डिगत कोट डगमगत कूट डोलंत भूरि भुव ॥

---

* पादशाहों के दरबार से प्रसन्न होने पर पाँचों कपड़ों की खिलत मिलती थी उसे सिरोपा कहते थे ।

† दारू—बारूद ।

भयौ सोर परचंड घोर चहुँ ओर दंड इक ।
खंड खंड गिरिवर बिहंडि डारयौ अखंड दिक ॥
जिमि चंड बात बद्दल बिहद उठै घुमंडि उमंडि रे ।
तिमि उड़त कोट पब्बै सहित दल दब्बै तलछत परे ॥२३१॥
परयौ सोर चहुँ ओर घोर सब बिकल नारि नर ।
उठी धूर धारा अपार नभ भूमि छार भर ॥
मारतंड छपि अंधकार छायौ दिसानु दस ।
सोरतोर तहँ और जौर करि सकै कौन कस ॥ (?)
फूट्यौ पहार सतखंड ह्वै अरध खंड गढ़ भरहरयौ ।
जुग दंड भयौ दारुन सबद चंड बज्र मानहु परयौ ॥२३२॥

चौपाई

उड़ी सुरंग कोट भहरान्यौ । परगट पातसाह जब जान्यौ ॥
लियौ प्रधान बोलि निज आगे । मुदित हाल सब पूछन लागे २३३
उड़ा पहाड़ कोट गढ़ जैसें । कीन्हौं अरज जोरि कर तैसें ॥
सुनि सुलतान हियें हरषान्यौ । आई फते हाथ यह जान्यौ२३४
उड़त कोट चहुँआन निहारयौ । कछुक सोच संका उर धारयौ ॥
सबहिनि करी अरज धरि धीर । सुनु चहुँआन बीर हम्मीर॥२३५॥
अबाय्यह समय सोच कौ नाहीं । निश्चय याकौ करौ सलाही ॥
जीते जंग फते तुम पाई । भाग्यौ पातसाह बरियाई ॥ २३६ ॥
पातसाह कौं भागत जानि । तेरो बैर आगिलौ मानि ॥
रनमल मिल्यौ सत्रु की ओर । दियौ भेद सिगरौ सब ठौर ॥२३७॥

सहसा तिन सुरंग लगवाई। दियौ कोट अरु कटक उड़ाई ॥
टूट्यौ कोट कटक बहु खोई। भयौ हाल कहि जात न जोई २३८
इहिँ बिधि भूपहिँ अरज सुनाई। सब मिलि रहे आपु सिर नाई॥
सुनि सब बात आनि उर धीर। बोल्यो बचन राइ हम्मीर २३९॥

हम्मीरदेव उवाच—दोहा

सुनौ सपृतौ साविकौ, सबकौँ परै न रोज।
लियौ जात याही समय, हित अनहित कौ खोज॥२४०॥
रनमल तो रिपु सरन मैँ, जाइ बचायौ प्रान।
दियौ भेद सब आपनौ, जोर परयौ सुलतान॥२४१॥
अब हमकौँ या कोट मैँ, लरिबो बैठि निसंक।
उचित नहीँ एकौ घरी, को राजा को रंक॥२४२॥
घरभेदी रिपु के निकट, बैठ्यौ करत उपाइ।
अनजानत ऐसहिँ कहूँ, फेरि न देहि उड़ाइ॥२४३॥
यातैँ अब कढ़ि कोट तैँ, बाहिर बम्ब बजाइ।
देखौ दल सुलतान कौ, कह्यौ भूप हरषाइ॥२४४॥

चौपाई

सुनि कै बचन भूपमुख वर के। हरषे सूरबीर भुज फरके॥
उठि निज निज गृह गए तुरंत। लागे सजन सूर सामंत २४५
आप राइ चहुँआन हमीर। तुरत मँगाइ गंग कौ नीर॥
करि असनानदान बहुदीन्ह्यौ। बहुरि विप्र गुरु पूजन कीन्ह्यौ २४६
लै प्रसाद पुनि बाहिर आए। भूषन बस्त्र सस्त्र मँगवाए॥
बिबिध बसन भूषन तन साज। माथैँ टोप मुकुट सम राज॥२४७॥

कसी कठिन पेटी तन त्रान । पहिरी झिलम भूप चहुँआन ॥
कटि कटारि छूरी तरवारि । कर कमान सर गहे सँभारि २४८
सज्यौ सूर छाजति छबि ऐसैं । चलत काम जीतन जग जैसैं ॥
ह्वै तयार नृप बाहन माँगे । सजि तुरंग तब ल्याए आगे २४९
चढ़ि चहुआन बीर हरषायौ । तब देवलकुमारि ढिग आयौ ॥
देख्यौ कुँवरि तात घर आयौ । सहसा उठी सकुचि सिर नायौ२५०
करि पियार पुत्री समुझाई । पुनि हमीर सब बात सुनाई ॥
सुनि पितुबचन सोच मन आनि । बोली कुँवरि जोरि जुग पानि२५१

देवलकुमारी उवाच—दोहा

सुनहु तात मेरी अरज, सुत बित बारहिं बार ।
होत जात लहि नरजनम, पुनि दुरलभ संसार ॥२५२॥
जीव रहै तो जग रहै, जीव गए जग जाइ ।
को सुत को बित कौन के, आवत कामि लखाइ ॥२५३॥
जीवतही के काम के, सुत बित सब परिवार ।
मरैं न काहू कौ कहूँ, काहू कियौ उबार ॥२५४॥

छप्पय

सुनहु तात मन गुनहु एक उपजी कंकालिनि ।
कुलकलंक लखि कियौ दूरि घर तैं घर-घालिनि॥
कै जानहु इक भई बाल पुनि नाहर मारी ।
कै जनमत मरि गई एक दासी घरवारी ॥
कर जोरि कहै देवलकुँवरि मो बिनती चित मैं धरौ ।
दै देहु मोहिं सुलतान कौं अचल राज गढ़ पर करौ ॥२५५॥

सोरठा

सुनत सुता के बैन, नैन चढ़े फरकी भुजा ।
बिहँसत-मुख-छबि ऐन, तब हमीर बोले बहुरि ॥२५६॥

हम्मीरदेव उवाच—छप्पय

करौं घोर घमसान घेरि दल बल दहपट्टौं ।
सुंडनिरहित बितुंड मुंड समसेरनि कट्टौं ॥
उठै रुंड रन रुधिर कुंड भरि भूत उमत्थैं ।
बधौं जुत्थ निज हत्थ लुत्थ पर लुत्थ उलत्थैं ॥
आलाउद्दीन मारौं पकरि देहुँ पठै जमलोक कौं ।
बेटी न बोलि काँचौ बचन यह समयो नहिं सोक कौं ॥२५७॥

दोहा

ठाढ़े कहि गाढ़े बचन, भूप सुतैं समुझाइ ।
मिल्यौ बहुरि चहुँआनपति, बड़गूजर सौं जाइ ॥२५८॥

चौपाई

जाजा बड़गूजर पै जाइ । कह्यौ हमीर देव समुझाइ ॥
जाजा तुम परदेसी लोग । तुम कौं रहिबौ इहाँ न जोग ॥२५९॥
तुम अब जाहु आपने धाम । हम सौं परयौ सत्रु सौं काम ॥
सूरज अगिनि रुद्र अहि काल । जद्दपि कोप ये करैं कराल २६०
बरषै इन्द्र घेरि घनघोर । गढ़ पर सजै प्रलय कौ तौर ॥
तदपि मरन तैं देहुँ न मीर । केती पातसाह की भीर ॥२६१॥
जाजा जगत जियत जौ रैहैं । बहुरि बुलाइ गेह सौ लैहैं ॥
अब तुम जाहु कह्यौ करि मेरौ । मरिबौ इहाँ उचित नहिं तेरौ २६२

सुनि हमीर के बचन सुहाए । बड़गूजर मन एक न आए ॥
भूप चरन मैं नायौ माथ । बोल्यौ बहुरि जोरि जुग हाथ २६३

बड़गूजर उवाच—पद्धरी छंद

सुनु महाराज हम्मीर देव । भर जनम आपकी करी सेव ॥
जिमि रहैं बंधु गृहजन हजूर । तिमि रह्यौ मान मेरौ जरूर ॥
दुरलभ जहान मैं भोग जौन । तेरैं प्रताप हम करे तौन ॥
बाहन अनेक गज रथ तुरंग । धौंसा नकीब सब चले संग ॥
मनिजटित हेमभूषन अनूप । हम सजे अंग तव संग भूप ॥
दुरलभ जहान मैं बसन जौन । हम किए राज बकसीस तौन ॥
षटरस मँगाइ भोजन अनूप । तुम करे मोहिं लै संग भूप ॥
तन रोम रोम मैं पग्यौ लौन । करि सकत अंग एकौ न गौन ॥

दोहा

जे जन जाए जार के, ते निज निज घर जाइँ ।
स्वामी संकट मैं तजै, को एतौ सुख पाइ ॥२६८॥
स्वामी कौं संकट परैं, जो तजि भाजै कूर ।
लोक अजस परलोक मैं, जमपुर जात जरूर ॥२६९॥

सोरठा

जे भाजत करि भोग, स्वामी कौं संकट परैं ।
बसत नरक मैं लोग, जौलौं ससि सूरज रहैं ॥२७०॥
सुनु हमीर नरनाथ, मैं बड़गूजर जात कौ ।
अब ह्वै हौं दै माथ, उरिन तिहारे लौन सौं ॥२७१॥

बोल्यौ बहुरि हमीर, साबस जग तेरौ जनम ।
करौ तयारी बीर, मैं मिलि आऊँ जननि कौं ॥२७२॥

दोहा

आयौ माता के निकट, तब हमीर नरभूप ।
लखी सतोगुनसकति सी, बैठी सती स्वरूप ॥२७३॥

चौपाई

आवत देखि पूत कौं आगैं । सहसा उठी मातु सुख पागैं ॥
समरसाज लखि साजे गात । जियौ सपूत कह्यौ अस मात २७४
तब हमीर दोऊ कर जोरि । बोलेउ बचन बिनयरस बोरि ॥
जीवनआस माहिं कछु नाहीं । यह असीस तुम दीन्हि बृथाहीं२७५
छत्री बरस बीस तै आगे । जियै तीस लौं जे बड़भागे ॥
सुनौ मात मैं तेरो पूत । मेरौ धरम रहै मजबूत ॥२७६॥
करि सुलतान संग संग्राम । हरिपुर करौं बास अभिराम ॥
यह असीस दीजै परकास । जीवन की कछु माहिं न आस२७७
यह कहि पर्‌यो चरन सिर नाइ । बीर हमीर देव हरषाइ ॥
सिर धरि हाथ बीर की माता । दई असीस उमग भरि गाता२७८

माता उवाच—दोहा

तीराँ ऊपर तीर सहि, सेलाँ ऊपर सेल ।
खग्गाँ ऊपर खग्ग सहि, रनसनमुख सुत खेल ॥२७९॥
भुज मुख छाती सामुहें, घावाँ ऊपर घाव ।
पलक न झंपै पूत की, चढ़ै चौगुनौ चाव ॥२८०॥

तिल तिल तन कटि कटि परै, तेगाँ मुक्ख मुवन्न (?) ।
दीधी तोहिँ असीस मैं, नारी गीत गुवन्न ॥२८१॥
जौ जूझै तौ अति भलौ, जौ जीतै तौ राज ।
देति पुकारैँ मैँ सबै, मंगल गावौ आज ॥२८२॥

तोटक छंद

जब लौँ जननी-ढिग भूप गए । तब लौँ सब सूर तयार भए ॥
सजि कै घर तेँ मन मोद-मढ़े । बढ़ि रंग-तुरंगनि माँझ चढ़े २८३
सब अंगनि सार सने सरसैँ । रिपु कौँ सुनि बाघ मनौ दरसैँ *॥
बरछी सर चाप कमान गहे । कटि तेँ सिर लौँ ढकि ढाल रहे२८४
मिलि जुत्थनि जुत्थ बरुत्थ बने । बलगैँ मिलि एकनि एक घने ॥
मुख जोस सँभार न रोस भरे । अति भीम भयंकर सस्त्र धरे२८५
बनि बीर सबै रनधीर महा । मग जोवत बोर हमीर कहाँ ॥
तिहिँ औसर भूप बिनै करिकै । पुनि बैन कहे पग मैं परिकै२८६

हम्मीरदेव उवाच—छप्पय

करौँ जुद्ध करि क्रुद्ध आज अवरुद्ध सुद्ध मन ।
अरि बिहंडि करि खंड खंड डारौँ गनीमगन ॥
परै सोर चहुँ ओर घोर दिन राति न सुज्झै ।
गज तुरंग रनरंग अंग भरि भूत अरुज्झै ॥
बिन मुंड रुंड धावै धरनि बचन बोलि चूकौँ नहीं ।
मारौँ न बाग रनभूमि तैं मानु मातु मेरी कही ॥२८७॥

---

* यह तुक लेखक की भूल से कुछ अशुद्ध लिख गया था उसको इस प्रकार से सँवार दिया है ।

दोहा

जो ईस्वर कारन कहूँ, उलटे मुरैं निसान।
तब तुम जौहर देखियौ, मेरौ बचन प्रमान ॥२८८॥
पुनि माता कै पग परसि, प्रमुदित राइ हमीर।
हरषि तुरंग मँगाइ कै, चढ्यौ बीर रनधीर ॥२८९॥
चढ़त राइ हम्मीर के, गहगह बजे निसान।
चढ़े सूर सावंत सब, रूपवान जसवान ॥२९०॥

मोतीदाम छंद

चढ़े चहुँआन धनी महराज। चल्यौ दल दाबि दिगंत दराज ॥
बजैं बहु बंब निसान अवाज। उठै घनघोर घटा जनु गाज २९१
सजोम जकंदत जात तुरंग। चढ़े रन सूरनि रंग उमंग ॥
लसैं सब अंग कसे तनत्रान। गहे बरछो करवाल कमान २९२
झुकी कलँगी सिर सोहत टोप। रही चढ़ि आनन औरइ ओप ॥
चढ़ीं भृकुटी दरसैं दृग लाल। भरे रनरोस मनौ रिपु काल२९३
चले जुरि जुत्थ बरुत्थ अनेक। लगे बलगै मिलि एकनि एक ॥
सज्यौ मद मत्त मतंग अनूप। हमीर बिराजत तापर भूप ॥२९४
मनौ गिरि कज्जल को मग जात। मढ़े मनि कंचन सौं सब गात ॥
मनौ मनिमंदिर तापर मंड। उदै रबि आप भयौ परचंड ॥२९५॥

दोहा

चल्यौ कटक को कहि सकै, ताकौ बिहद बिबाह।
चल्यौ मनौ परलय करन, सागर तजि मरजाद ॥२९६॥

ग्रीषम गहर गनीम कौ, गारन गरब झुकारि।
चढ़्यौ प्रबल पावस नृपति, दल बद्दल बल धारि ॥२९७॥

छप्पय

उठी धूर धुरवानि धरनि जलधर दल जुट्टैं।
धवल धजा बकपाँति अग्र छनछाछबि छुट्टैं॥
घुरै बंब घनघोर बिरद बन्दी पिक बोलैं।
गज तुरंगरथबेग बिहद हद मारुत डोलैं॥
छिति अंधकार छायौ सघन दृग पसारि लूकै न कर।
दीसै न पंथ पावस नृपति चढ्यौ साजि दल जलद बर २९८

चौपाई

बाजे बिहद जुझाऊ बाजैं। निरतैं मग तुरंग गज गाजैं॥
पढ़ैं बिरद बंदी बर जोर। मढ्यौ राग मारू सब ठौर॥२९९॥
धौसनि धमक-धूम छिति छाई। सुनै कौन निज बात पराई॥
चलत कटक डोलत इमि धरनी प्रबल पवन-हत जिमि लघु तरनी ३००
सहमि सुरेस संक मन मानें। धनाधास तजि धीर पराने॥
मंदर मेरु कली सम कंपै। फाटत फन फनसी फन झंपै* ३०१
करत बाजि-खुर छार पहारनि। धोवत महि मतंग मदधारनि॥
महाराज चहुँआन हमीर। राजत मनु सुरेस रनधीर॥३०२॥

दोहा

महि कंपै चंपै चरन, रबिरथ झंपै धूरि।
चढ़्यो राइ हम्मीर इमि, जुद्ध हरष भरि पूरि॥३०३॥

---

* इस तुक का पाठ ऐसा ही मिला है।

छप्पय

उतै साह आलाउदीन हम्मीर देव इत।
सजे जुद्धहित क्रुद्ध बरनि को सकै सोभ तित ॥
दुहूँ दिसि खुले निसान बंब मारू बहु बज्जैं।
पढ़ैं बिरद बंदी बिलोकि सुरनायक लज्जैं ॥
गज तुरंग पायक प्रबल दल बिलोकि दुहुँ दिसि घने।
कुरुखेत करन अरजुन मनौ जुद्ध हेत बहु बिधि बने॥३०४॥

भुजंगप्रयात छंद

दुहूँ ओर तैं सूरसेना सिधाई। महा मेघ कैसी घटा घेरि आई॥
महा अस्त्र औ सस्त्र सारे चमंकैं।प्रलैकाल की दामिनीसी दमंकैं ३०५
गहे खग्ग खंडा प्रचंडा दुधारे। छुरा सक्ति सूलं सरं चाप धारे॥
लसैं बीर बंके निसंकं जुझारे। महा मोद बाढ़े दुहूँ ओर सारे३०६
सुने बोरबाजे बली बीर बाजैं। करैं सिंहनादं मनो मेघ गाजैं॥
उमंगैं भरे रंग जंगैं उमाहैं। दुहूँ ओर सौं आपनी जीति चाहैं ३०७
उतै साह आलाउदीनं गभीरं। इतै राइ चौहान हम्मीर धीरं॥
लसैं मत्त मातंग पै दोउ ऐसै। लसैं स्वर्ग मैं संभु औ सक्र जैसें ३०८

सोरठा

आनन औरै ओप, भुज फरकत हरषत हियौ।
भए अरुन दृग कोप, देखीदेखा दुहूनि सौं ॥३०९॥
ताते करे तुरंग, अंग अंग उमगे सुभट।
चढ़ौ चौगुनौ रंग, सूरन के तन बदन मैं ॥३१०॥

कवित्त

आनि जुरे कटक दुहूँ दिसि तैं कंपि मुख,
ओपि रन-सूरन कैं सेखी बरसत हैं*।
छाई छबि छूटै छटा निनद निसाननि की,
बाजै बीर-बंब राग मारू सरसत हैं॥
आगैं बढ़ि सुभट सुनावै सिंहनादै एक,
एकै हाँकि हरषि कृपान करसत हैं।
भारथ के पारथ औ भीषम समान ये,
हमीर औ अलाउदीन दोऊ दरसत हैं॥३११॥

दोहा

दल दीरघ दोऊ सजे, आए निकट निदान।
दुहूँ ओर सूरनि हरषि, गहे सरासन बान॥३१२॥
बंदूकैं बोरनि सजीं, द्वै द्वै गोली डारि।
रंजक दै छाती धरीं, जलद जामि की (?) वारि॥३१३†॥
हाँकि हाँकि मारन लगे, डाँटि डाँटि रन सूर।
मारु मारु दल दुहुनि मैं, सबद रह्यौ भरि पूर॥३१४॥

* ब्रजभाषा में कृदंत क्रिया के स्त्रीलिंग का रूप इकारांत होता है। पर प्रायः कवियों ने तुकांतों की आवश्यकता से इस नियम का भंग करके इसका अकारांत प्रयोग भी कर लिया है। यह उनकी कोरी धींगाधींगी है।

† इसके दूसरे तुक का पाठ गड़बड़ है।

कवित्त

गहर गराव नक (?) बहरत भूमि मढ़ो,
गगन गरद मैं न भानु सरकत है ।
बरषत गोली बरषा मैं ज्यौं जलद ज्वान,
मारैं बान तानत कमान मरकत है ॥
केते लोट पोट भए समर सचोट केते,
बाहन पै बिकल बिहाल लरकत हैं ;
फाटे परे रेजा लौं करेजा टूक टूक कढ़े,
छाती छेदि बिसिष बिसारे करकत हैं* ॥३१५॥
उतै साहआलम अलाउद्दीन गाजी इतै,
महाबीर नृपति हमीर रन-रंग मैं ।
दुहूँ दंत दलनि दिलासौ दुहूँ ओर देखि,
चढ़ै चोप चौगुनी उमंग अंग-अंग मैं ॥
मारे तीर गोलिनि के धार न धरति छिति,
गगन समीर न सकत चलि संग मैं ।
दारु बिन सिंग बानरहित निखंग भयौ,
जंग भयौ दारुन दुहूँ के परसंग मैं ॥३१६॥

चौपाई

बढ़ि बढ़ि करैं सूर सब वार । परीं बान-गोलिनि की मार ॥
लगीं दुहूँ दिसि दारुन चोटैं । घायल परे भूमि मैं लोटैं ३१७

* इस कवित्त के प्रथम तुक का पूर्वार्ध स्पष्ट नहीं है ।

अंगभंग रन फिरैं तुरंग । लगैं दाव जिमि बिपिन बिहंग ॥
जरजर गात जात मग भागे । बिकल बितुंड बान बहु लागे ॥३१८
ढीले धनुष भए जिह टूटैं । भे खाली निखंग सर खूटैं ॥
दुहूँ ओर पिलि चले तुरंग । परा मारि नेजनि के संग ॥३१९॥
हाँकि हाँकि रिपु हनैं सजोर । बरपैं अस्त्र सस्त्र अति घोर ॥
खुलीं खग्ग को करै सुमार । रन मैं परी भयंकर मार ॥३२०

कबित्त

चले सूल सर सेल दल पेलि बगमेल परे,
गोलनि पै गोल बोलि बचन प्रमान ।
भयौ घोर घमासान धूरि धाई आसमान, तहाँ
आपनौ परायौ न परत पहचान ॥
मारु मारु धरु तोरु सिर फोरु मुख मोरु,
मच्यौ सोर ठौर ठौर सुनि परत न आन ।
जहाँ पारथ समान रच्यौ भारत हमीर करै,
वीर रनधीर पुरुषारथ अमान ॥ ३२१ ॥
खुले काल तैं कराल करवालनि के जाल लाल,
लाल मुख सुभट उमंग सरसाइ ।
परी मारि तरवारिनि को करत सुमार कटे,
टोप तनत्रान परे भूमि भहराइ ॥
परे बाजि बिन कंठ बिन सुंडनि बितुंड उठे,
मुंडनि बिहीन रन रुंड रहे धाइ ।

तहाँ पारथ समान पुरुषारथ निधान,
चहुँआन-सिर-मुकुट हमीर दरसाइ ।।३२२।।
जुरे बाजिनि सौं बाजा औ गजनि गजराज पिले,
पायक प्रबल रनरोस सरसाइ ।
डटो ढालनि सौं ढाल करबाल करबाल वीर,
खंजर कटारनि हनत हरपाइ ।।
परे लुत्थनि पै लुत्थ कटे बिहद बरुत्थ,
करकत सर सूल भभकत भरि घाइ ।
तहाँ पारथ समान पुरुषारथ करत,
चहुँआन-सिर-मुकुट हमीर दरसाइ ।।३२३।।
कटी कूँडी टोप कवच सनाह टूक टूक परी,
झूमि झूमि भूमि मैं झिलिमि झहराइ ।
परे झुंडनि के झुंड कटे वीर बरबंड कहूँ,
रुंड कहूँ मुंड कहूँ तुंड तलफाइ ।।
भिरैं भूत भीम भैरव भ्रमत रन रुद्र जुरि,
जोगिनी जगावत मसान जस गाइ ।
होत जंग मन मुदित उमंग सरसाइ हेर,
हनत विपच्छिनि हमीर हरषाइ ।। ३२४ ।।
चली खेत रनथंभ के विषम तरवारि मारि,
मारि मुख कढ़त मढ़त तन घाइ ।
परे अंग कटि सुभट तुरंग न चलत,
चरबी के चहले मैं चलि सकत न पाइ ।।

भरे कुंडनि रुधिर रन रुंडनि की रासि भषैं,
मास खग-जंबुक-पिसाच-समुदाइ ।
तहाँ बीर बलवान चहुँआन रनधीर खग्ग,
बाहत हमीर हठधारी हरषाइ ॥३२५॥

खेत रनथंभ के हमीर रनधीर बली,
सेना पातसाह की कृपान-मुख मारी है ।
लुत्थन पै लुत्थ परं घायल बरुत्थ परं,
हत्थ कहूँ मत्थ खात आमिष-अहारी है ॥
लोहू के अलेल मैं गलेल देत भूत भिरैं,
रुंडनि कौ प्रेत औ पिसाच सहचारी है ।
तारी देत कालिका किलकि किलकारी दै कै,
भारी मुंडमालिका महेसउर डारी है ॥३२६॥

लरे पातसाह औ हमीर रनथंभ-खेत,
वीरता बखानै कौन सुभट अरे जे हैं ।
हाँकि हाँकि दलनि दबाइ दहपट्टि हते,
बाजो औ बितुंड झुंड झूमत खरे जे हैं ॥
मारे रन मुगल पछारे पीरजादे,
अधफारे फर लोटत पठान वे लरे जे हैं ।
पार भए नेजे घूमि भूमि में परे जे करे,
टूक टूक रेजे सरे रेजे से करेजे हैं ॥३२७॥

सवैया

बीर हमीर इतै रनधीर लरै उत सौं सुलतान सु हेलैं।
मार परी तरवारिनि की बरसैं सर सूल भयंकर सेलैं॥
टोप कटे कुलही* तनत्रान मचो घमसान भए दल भेलैं।
लोहू अधायल ह्वै रहे हायल घूमत घायल फाग सी खेलैं॥३२८॥

छप्पय

विषम चलीं तरवारि मारु-धुनि मारु-मारु-धुनि।
मढ़यौ सोर यह घोर परत नहिं और बात सुनि॥
जुत्थ-जुत्थ कटि परैं लुत्थ पर लुत्थ उलत्थिय।
कुंडनि श्रोनित भरे सुंड बिन डोलत हत्थिय॥
असवार डिगत बाहन फिरैं भिरैं भूत भैरव बिकट।
नाचैं गिरीस गिरिजा सहित रंगभूमि मुंडनि निकट॥३२९॥

भयौ घोर घमसान रोर दसहूँ दिसि माची।
डहडह बज्जै डमरु जूह जुग्गिनि जुरि नाची॥
भ्रमत भूत जमदूत बीर बेताल बहक्कैं।
ताल देत भैरव पिसाच मिलि प्रेत डहक्कैं॥
कर गहि कपाल पीवै रुधिर कंकाली कौतुक करै।
गन सहित रुद्र जाग्यौ समर लाग्यौ घर मुंडनि भरै॥३३०॥

चुंचनि चुत्थैं गृद्ध माँस जंबुक मिलि भच्छैं।
चाटैं चरचि पिसाच प्रेत गहि हाड़ प्रतच्छैं॥

---

* शिर के रक्षार्थ युद्ध के समय पहनी जाती है।

भषैं मोद भरि भूत रुंड भैरव लै भज्जैं।
गहि कपाल रत पान करत चंडो गलगज्जैं॥
नाचैं निहारि जुरि जोगिनी सुभट जच्छ कन्या बरैं।
रनभुम्मि भए कायर बिमुख सूर समर साका करैं॥३३१॥

दोहा

भयो जुद्ध दिन सात लौ, रातदिवस इकसार।
रुंड मुंड परि खेत मैं, परगट भयो पहार॥३३२॥
कढ़ीं कुटिल-गति कोट तैं, श्रोनित-सरित अपार।
मज्जन करत पिसाच-गन, रुद्र सहित परिवार॥३३३॥

भुजंगप्रयात छंद

परे मत्त दंती मरं सुंडखंडे। उभै ओर ते कूल राजैं प्रचंडे॥
बहै लाल लोहू लसै वारिधारा। मनौ कौल फूले कलंगी अपारा३३४
परे अंग-भंगं तुरंगं अनेकं। तिरैं ग्राह मानों गहे एक एकं॥
फटे रुंड मुंडं कटे केस छूटे। मनौ पाज(?)कौ पाइ सेवाल जूटे३३५
परे खग्गखंडा प्रचंडा दुधारे। फिरैं धार मैं ज्यौं महा ब्याल कारे॥
तनं-त्रान फूटे फटे टोपढालं। परे नीर मैं ज्यौं महा जंत्र-जालं ३३६
बहे बस्त्र फेनं फँसे अस्त्र मीनं। महा मक्र से सूर सावंत पीनं॥
चली जोर बेगं महा घोर धारा। गिरे गर्व वृच्छं प्रतच्छं अपारा३३७
लसैं भौंर से भीम हैं चक्र जामैं। कलत्थंत सूरं तरंगं ललामैं॥
करैं केलि कालीं कपाली समेतं। करैं पान केते तृषावंत प्रेतं ३३८
भिरैं भूत भैरव भरे गात धोवैं कलोलैं तिरैं जोगिनी ताप खोवैं॥
परैं गीध आकास तैं आनि टूटे। बिना सोक कोकावली हंस जूटे ३३९

महा भीम भारी नदीयाँ गँभीरं। करी जुद्ध मैं बीर हम्मीर धीरं॥
तहाँ कोपकै साह आलाउदीनं। गही हाथ कम्मान औ बान लीनं ३४०

छप्पय

गहि कमान कर तानि साह आलाउदीन इमि।
करै बानबरषा अपार सर बारिधार जिमि॥
गिरैं बीर रनधीर भिरैं सनमुख दल दोऊ।
पीछें देत न पाँव फेरि फिर सकत न कोऊ॥
मोड़ैं न बाग छोड़ैं न छिति अड़ि घोड़े जड़ गति रहे।
श्रोनित अन्हाइ घायल सुभट तन-घायल जकि थकि रहे॥३४१॥

दोहा

भूर सूर करनी करैं, टरैं न तनि रन-खेत।
सात दिवस संगर भयौ, निसिदिन रहा न चेत॥३४२॥

सोरठा

बरषत सर सुलतान, बिकल देखि दल आपनौ!
गहि कृपान चहुँआन, परयौ मृगनि मैं सिंह ज्यौं॥३४३॥
नागनि कौं मृगराज, बाज बटेरनि ज्यौं हनै।
त्यौं हमीर गलगाज, हन्यौं साह-दल आपही॥३४४॥

मोतीदाम छंद

गही करबाल हमीर कारि। दलं दहपट्टि दियौ महि डारि॥
करे जुग खंड बिहंडि बिहंडि। दिए जमदूतनि कौं जनु बंडि ३४५
करै रनरंग तुरंगनि भंग। चरै मनु केहरि कोपि कुरंग॥
परैं रनसूर कलत्थ-कलत्थ। कहूँ धड़ मत्थ कहूँ पग हत्थ॥३४६॥

फिरैं रन घूमत घायल सूर। अघायल श्रोनित चायल चूर॥
कटे तन त्रान फटे सिर टोप। लटे रिपुरंग मिटी मुखश्रोप॥३४७॥
लगे रन धावन रुंड अपार। बही पुनि दारुन श्रोनितधार॥
उठे अति कोपि कबंध उदार। भई यह भूमि भयंकर मार॥३४८॥
जहाँ चहुँआन गही समसेर। दिए सब सत्रुनि कं मुख फेरि॥
चढ़यौ गज भाजत फौज निहारि। तहाँ सुलतान गयौ हिय हारि३४९

दोहा

भाग्यौ दल सुलतान कौ, जोर परयौ चहुँआन।
हाँकि हाँकि मारन लगे, धीर बीर बलवान॥३५०॥

छप्पय

भयो जुद्ध अति घोर राम रावन रन जुज्झे।
पुनि पारथ अरु करन कोपि कुरुपंत अरुज्झे॥
लरयौ भीम गहि गदा गाजि दुरजोधन मारयौ।
पुहुमि राय सौं जुद्ध काल चहुँआन सँघारयौ (?)॥
सुलतान गरब गंज्यौ समर तिमि हमीर सूरनि सजे।
निरतंत रुद्र नारद निरखि डिमि डिमि डिमि डमरू बजे३५१

सोरठा

भयौ घोर घमसान, परे खेत सिगरे सुभट।
दल सब आयौ काम, रहे नषत ज्यौं भोर के॥३५२॥
दल बल सान गँवाइ, दै हमीर कौं सुजस बर।
भग्यौ साह सिर नाइ, पील चढ़यौ जित तित लखत॥३५३॥

चौपाई

भागी सेन साह की ऐसैं । बधिक-जाल तें पंछी जैसैं ॥
सूखे अधर बदन कुम्हिलानैं । खोई सान सकल सनमानैं ॥३५४॥
झुके सीस सब सस्तर डारे । परत न पग मग मैं मन-मारे ॥
भयौ साह तन-बदन-मलीनौ ज्यौं रबिउदै चन्द द्युतिहीनौ ॥३५५॥
जब हमीर नृप जीत्यौ जंग । सूरनि चढ़्यौ चौगुनौ रंग ॥
बढ़ि बढ़ि बहाके वीर चहुँआन । छीनि साह के लिए निसान३५६
जूझे सूर बीर रनधीर । पाई फते राइ हम्मीर ॥
राइ खेत जब झारन लागे । झुके निसान गए बढ़ि आगे ॥३५७॥
होनहार भावी बलवंत । बिधि कौ किहूँ न पायौ अंत ॥
तुरितै आइ महल तैं बूझी । दई सुनाइ अतिहिं अनसूझी ॥३५८॥
झुके निसान कोट दिसि आवैं । और न कोऊ संग लखावैं ॥
सुनि सबहिनि बिचार यह कीन्यौ रन मे महाराज जस लीन्यौ३५९
रन तैं मुड़्यो न छत्री आन । गढ़ दिसि आवत मुड़े निसान॥
अब रिपु फते खेत मैं पाई । लैहै लूटि कोट बरियाई ॥ ३६०॥
यातैं हुकुम भूप कर जौन । आज उचित करिबौ है तौन ।
यह बिचार सब रानिन कीन्ह । करि असनान दान बहु दीन्ह३६१

दोहा

ह्वै पवित्र नृपबचन गुनि, सब रानिनि रनिवास ।
बिन कारन जौहर भयौ, बिधि-अनरथ परकास ॥३६२॥
होनहार सो ह्वै रह्यौ, बिन कारन बिन जोग ।
जैसैं या रनथंभ कौ, जौहर को उपयोग ॥३६३॥

छुरी खंड अरु खड्ग लै, मरीं कटारी खाइ।
केतिक दारू मैं जरीं, दारू जोरि बिछाइ ॥३६४॥
एकै साहस मैं भरीं, परीं कूप मैं दौरि।
कोऊ गिरि गिरि गेह मैं, मरीं आप सिर फोरि ॥३६५॥
दस हजार जौहर भयौ, छिन मैं लगी न बेरि।
तब उलट्यौ रनथंभगढ़, नृप हमीर दल फेरि ॥३६६॥
जीति जंग सुलतान सौं, चढ़्यौ रंग चहुँआन।
भरि उमंग आवत चल्यौ, गहगह बजत निसान ॥३६७॥
आवत भूप उमंग भरि, सुन्यौ कुलाहल कान।
पूछ्यौ तब काहू कह्यौ, सब बिरंतत बखान ॥३६८॥
दस सहस्र जौहर भए, सुनि हमीर चहुँआन।
सुनि सँदेस आवत चले, गढ़दिस झुकें निसान ॥३६९॥

चौपाई

सुन्यौ श्रवन जब जौहर होन। छिन इक रह्यौ भूप गहि मौन॥
पुनि बिचार मन मैं ठहरायौ। बिधि-परपंच न परत लखायौ॥३७०॥
कीन्यौ करत करैगौ सोई। यह बिधिचरित न जानत कोई॥
बिधि बलवान जगत सब मानौ। बिधिबस सकल सुरासुर जानौ ३७१
जो बिधि चहै करैहै सोई। मेटनहार और नहिं कोई॥
जो चाही कीन्ही बिधि तौन। हरष सोक यामैं कहु कौन ३७२
होनहार सो टरै न टारे। सिव श्रीपति बिरंचि पचि हारे॥
कोटि उपाय करै किन कोई। बरबस होनहार सो होई॥३७३॥

कवित्त

भावी बस भूमि जल पावक अकास पौन,
भावी हरतार करतार प्रभु लेषियै।
भावी बस अंगिरा बसिष्ट मुनि नारद औ,
सनक सनंदन सनातन बिसेषियै॥
भावीबस सेस औ सुरेस औ बरुन जम,
काल ससि सूरज असुर अवरेषियै।
भावी चहै जोई सोई करै औ करावै जग,
भावीबस ईस औ अनंत बिधि देषियै॥३७४॥

दोहा

गावत गुन आगम निगम, निसिदिन लहत न अंत।
तीन काल जुग चारि मैं, है भावी बलवंत॥३७५॥

हानि लाभ जीवन मरन, चर अरु अचर समान।
बिधि-प्रपंच परगट जगत, भावीबस सब जान॥३७६॥

है हरता करतार प्रभु, कारन-करन अखेद।
यह बिचारि चहुँआन के, मन उपज्यौ निरवेद॥३७७॥

समर जीति जौहर सदन, सब ईस्वर परपंच।
कीन्ह्यौ यह निरधार मन, हरष सोक नहिं रंच॥३७८॥

झूठौ जग बस और के, स्वबस बात नहिं एक।
निहचै करि हम्मीर नृप, बोले सहित बिवेक॥३७९॥

चौपाई

सब मिलि सुनौ बात दै कान । है मेरौ यह बचन प्रमान ॥
मैं रिपु भंग जंग मैं कीन्यौ । सुजस राखि सरनागत लीन्यौ ॥३८०॥
समर जोति सब सत्रु भगाए । सुजस समेत लौटि गढ़ आए ॥
इन सबहिनि मिलि तजे परान । मेरा बचन न दीन्यौ जान ॥३८१॥
समर जोति जौहर कौ होन । जो अहचरज भयौ यह तौन ॥
अब बिलोकि मेरे मन आई । है प्रधान ईस्वर सब ठाई ॥३८२॥
जग मैं लह्यौ सुजस बहुतेरौ । गयौ गेह छिन मैं मिटि मेरौ ॥
उभै तमासे नैननि जोहि । उपज्यौ तत्व-ज्ञान अब मोहिं ॥३८३॥
यह जग इंद्रजाल सम जानौ । करनहार नट सरिस बखानौ ॥
छिन मैं करत और कौ और । देखि न परै रहै सब ठौर ॥३८४॥
कारन करन आप सब जोई । सिरजनहार जगत कौ सोई ॥
ताकी सरन आज मैं जैहौं । राज भार सुत के सिर दैहौं ॥ ३८५॥

दोहा

जाहि जानि रन मैं मरयौ, जरयौ सकल परिवार ।
छन भर उचित न जीवनौ, ताकौ इहिं संसार ॥३८६॥

कवित्त

दान दीने द्विजनि दरिद्र करि दूरि भूरि,
दंड दीने खलनि प्रचंडनि उताल मैं ।
हार दीनी अरिनि बिडारि तरवारि मुख,
न्याइ दीने सकल निपाटि सुनि हाल मैं ॥

तात मात सुंदरी सकल परिवार सुख,
दीने मैं हमीर हठधारी सब काल मैं ।
राज दैहौं सुत कौं समाज सब साजि आज,
सीस देहौं अरपि गिरीस जू की माल मैं ॥३८७॥

राज सिर सुत के समाज-सिर काज-भार,
देत मैं न करत विषाद नेंकु मन मैं ।
सोधि सोधि सबहिं प्रबोधि कै प्रसंग कहै,
बोध देत घटत उछाह सब तन मैं ॥
चक्कवै हमीर धीर धरमधुजा की ध्वजा,
सीस देत ईस कौं छितीस एक छन मैं ।
रौर परी दौरि अकुलाने अलकेस लगीं,
सोर करै सुंदरी सुरेस के सदन मैं ॥३८८॥

सवैया

साजि कै राज कौ साज सबै सुत के सिर आप दियौ करि टीकौ ।
गंग के नीर कियौ असनान दियौ बहु दान दुजातिनि ही कौ ॥
लै अपने कर मैं करवाल नरेस हमीर हठी अति नीकौ ।
काटि दियौ सिर ईस के हाथ भयौ सुरलोक मैं नाथ सची कौ ॥३८९॥
सीस चढ़ाइ दयौ नरनाथ हमीर हठा जग जानत सारे ।
देव बधू बरषैं बर फूल बजैं नभ नौबत ढोल नगारे ॥
जात बिमान चढ़्यौ चहुँआन तुरैं सिर चौंर दुहूँ दिसि भारे ।
आनि गही उठि श्रीपति बाँह भए हरिसेवक सेवनहारे ॥३९०॥

दोहा

जीवत अरि दल दलमल्यौ, मरि लीन्यौ हरिधाम ।
धन हमीर छितिछत्रपति, अमर तिहारो नाम ॥३९१॥

कबित्त

माने देव दुज सनमाने साधु संत हित,
अहित पिछाने सुख साने बाम धाम कौं ।
लाले सुत वाले प्रतिपाले या पुहुमि पर,
घाले मुख काले कै निकाले चोर चाम कौं ॥
लीने जग सुजस हमीर करि साके बीर,
कीने लोक अमर जसोले निज नाम कौं ।
मारे अरि समर सुरंस दुख टारे आज,
फारि रबिमंडल सिधारे सुरधाम कौं ॥३९२॥

दोहा

देखि सोच बस सक्र कौं, निज मत हँसे हमीर ।*
... ... ॥३९३॥
को या धरती में भयौ, तुव समान चहुँआन ।
अरि मारयौ तन परिहरयौ, बचन न दीन्यौ जान ॥३९४॥
बलि बावन कुन्ती करन, ज्यौं नृप सिवी कपोत ।
त्यौं हमीर औ मोर कौ, कलि मैं सुजस उदोत ॥ ३९५ ॥
छत्रिनि के कुल कौ भयौ, छिति पर भानु हमीर ।
कियौ सुजस परताप सौं, जगत उज्यारौ बीर ॥ ३९६ ॥

* यहां का एक तुक छूट गया है ।

बहुरि गयौ बैकुंठ कौं, नृप हमीर चहुँआन ।
कियौ राज ताको तनय, जानत सकल जहान ॥ ३९७ ॥
यह हमीर कौ रायसौ, चित्रलिख्यौ लखि सार ।
छंदबंद सेखर कियौ, निजमति के अनुसार ॥ ३९८ ॥
महाराज के हुकुम तैं, सिद्ध होत सब काज ।
भयौ ग्रंथ जिनकी कृपा, परिपूरन सुभ आज ॥ ३९९ ॥
कर नभ रस अरु आत्मा, संवत फागुन मास ।*
कृष्णपच्छ तिथि चौथ रबि, जेहि दिन ग्रंथ प्रकास ॥ ४०० ॥
राधाबर, कै जगत मैं, श्रीनरेन्द्र मृगराज ।
सेखर कौ प्रभु लोक मधि, दूजौ लखत न आज ॥ ४०१ ॥
मोहिँ भरासौ रावरौ, महाराज सिरमौर ।
करौ कृपा द्विज दीन पै, निरखि आपनी ओर ॥ ४०२ ॥
जौलौं ससि सूरज रहैं, सुरपुर सक्र समाज ।
चिरंजीव तबलौं रहौ, श्रीनरेंद्र मृगराज ॥ ४०३ ॥

इति श्रीहम्मीरहठ चंद्रशेखर-कवि-कृत संपूर्ण ।

शुभम्भूयात् ।

---

* १९०२ ।